CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हि ५६८
1300

6.4

मुनिराज सभा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हि० ८८९

श्री गणेश वर्णी दि. जैन (शोध) संस्थान
ग्रं. सं. १३००
नरिया (का. हि. वि. वि.) वाराणसी-५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Narla, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्री १०८ सुमतिसागर जी मुनि महाराज

श्री १०८ ज्ञानसागर जी मुनि महाराज

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

卐 श्रीमहावीरायनमः 卐

* मङ्गलाचरण *

सिन्दूर प्रकरस्तपः करिशिरः क्रोडे कषायाटवी—
दावार्चिर्निचयः प्रबोधदिवसप्रारम्भसूर्योदवः ।
मुक्तिस्त्रीकुचकुम्भकुङ्कुमरसः श्रेयस्तरोः पल्लव-
प्रोल्लासः क्रमयोर्नखद्युतिभरः पार्श्वप्रभोः पातुवः

—(×)—

श्री १०८ मुनि सुमतिसागर जी महराज पूजा

ॐ ह्रीं श्री सुमति सागर जी महराज मुनिभ्यो नमः अत्र अत्र तिष्ठः तिष्ठ स्थापनं सन्निधी करणं ।।

मुनि पूजा करूं या मोक्ष मारग धरूँ या
करूं भव सागर पार, मिणाऊँ सुख निवार ।। टेक ।।
पाप मणाला, दूर कराया, समर्थ जे या भुवने ।
निर्मल शीतल, सुरुचि रहे जल, सुवर्ण कलश भरोनी ।।
बाहु पाद जल धार, मिणाऊँ सुख निवार ।। जलं ।।
मुनि पूजा करू या मोक्ष मारग धरूं या
गुण गाऊँ भवदधिपार मिणाऊँ सुख निवार ।।
शीतल चन्दन मलया गिर सा देय मना आनन्द ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ले पत यांचा, करूँ सर्वांगी, दखल तो हा सुगन्ध ॥
भव ताप हराय होत से पार, मिणाऊँ सुख निवार ॥ चंदनं ॥

मुनि पूजा करूँ या मोक्ष मारग धरूँ या
करूँ भव सागर पार मिणाऊँ सुख निवार ॥
कंचन पात्री, धवल सुवासिक तन्दूला ची रास
पदक मलीया अरपण करूँ या, तोड़ाया भव पास ॥
शिव स्वरूप, शिवकार, मिणाऊँ सुख निवार ॥ अक्षतं ॥

मुनि पूजा करूँ या मोक्ष मारग धरूँ या
करूं भव सागर पार, मिणाऊं सुख निवार ।
जाई जूई सेवित मनोहर, गुलाब चम्पक संगेति
कमल हो सु निर्मल, बकुल ही वाहु पद कमल फुलेसि
सुगन्ध सुमन मिणनार—मिणाऊं सुख निवार ॥ पुष्पं ॥
मुनि पूजा करूं या मोक्ष मारग धरूं या
करुं भव साजर पार, मिणाऊँ सुख निवार ।
लाडू बर्फी मोद करंजा, जलेबी पुरिया सुन्दी ।
भाव भक्ति ने वाहूप दिया होय मना आनन्द ।
हा क्षुधा रोग शम नाण, मिणाऊं सुख निवार ॥ नैवेद्यं ॥

मुनि पूजा करूं या मोक्ष मारग धरूं या
करुं भव सागर पार मिणाऊं सुख निवार ।
करूं या आरति कर्पूर ज्योति, हरे मान के रलेती ।
सुवर्ण पात्र यो वाणुया अज्ञान नाश मेति ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हा दूर करो अन्धकार, मिणाऊँ सुख निवार ।। दीपं ।।
अष्ट कर्म ला दग्ध कराया धूप दशांग ला ।
ज्वालन-करूं या कर्मा दुनिया भक्ति भाव या ला ।।
सन्ताप पुर शम नार, मिणाऊँ सुख निवार ।। धूपं ।।
मुनि पूजा करूं या मोक्ष मारग धरूं या
करूं भव सागर पार, मिणाऊँ सुख निवार ।
द्राक्षे अम्बा, लिम्बू द्राडिम्म बादाम अनकेणिती ।
आक्रोड़ सीताफल जाम्बुल नारियण नाना फल अर्पूती ।
मग मोक्ष फलते मिणनार ।। फलं ।।
जल गन्धाक्षत पुष्प चरु और दीप धूप फल लाय,
कमल मन्त्रणे मग खास तुम्हीं हो मोक्ष फल पावान,
हा बोध मणी असनार मिणाऊँ सुख निवार ।। अर्घं ।।
मुनि पूजा करूं या मोक्ष मारग धरूं या
करूं भव सागर पार मिणाऊँ सुख निवार ।।

शान्ति धारा पुष्पान्जलि क्षिपेत्
ॐ शान्तिऽ शान्तिऽ शान्तिऽ ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

॥ वीतरागस्तोत्रम् ॥

(मिश्रित भाषा)

शिवं शुद्धबुद्धं परं विश्वनाथम्,
व देवो न बन्धुर्न कर्ता न कर्मं ॥
न अंगं न सङ्गं न स्वेच्छा न कायम्,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ॥ १ ॥

न बन्धो न मोक्षो न रागादिलोभं,
न योगं न भोगं न व्याधिं न शोकम् ॥
न कोपं न मानं न मायं न लोभम्,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ॥ २ ॥

न हस्तौ न पादौ न घ्राणं न जिह्वा,
न चक्षुर्न कर्णं वस्त्रं न निद्रा ॥
न स्वामी न भृत्यं न देवो न मर्त्यः,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ॥ ३ ॥

न जन्म न मृत्युः न मोदो न चिन्ता,
न क्षुद्रो न भीतो न कार्श्यं न तन्द्रा ॥
न स्वेदं न खेदं न वर्णं न मुद्रा,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ॥ ४ ॥

त्रिदन्डे त्रिखण्डे हरे विश्वनाथम्,
ऋषिकेशविध्वस्तपरमारिजालम् ॥
न पुन्यं न पापं न चाक्षादिपापम्,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ॥ ५ ॥
न बालो न वृद्धो न तुच्छो न मूढ़ों,
न खेदं न भेदं न मूर्तिर्न स्वेदः ।
न कृष्णं न शुक्लं न मोहं न तन्द्रा,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ॥ ६ ॥
न आद्यं न मध्यं न अन्तं न चामन्यम् ।
न द्रव्यं न क्षेत्रं न कालो न भावः
न शिष्यों गुरुर्तापि हीनं न दीनम्,
चिदानन्द रूपं नमो वीतरागम् ॥ ७ ॥
ज्ञानस्वरूपं स्वयं तत्ववेदी,
न पूर्णं न शून्यं न चेत्यम् स्वरूपी ॥
न चान्योन्यभिन्नम् न परमार्थमेकम्,
चिदानन्दरूपम् नमो वीतरागम् ॥ ८ ॥
आत्मारामगुणाकषं गुणनिधिं चतन्यरत्नाकरम् ।
सर्वे भूतगतागत सुखदुखे ज्ञाते त्वया सर्वगे ॥
त्रैलोक्याधिपते स्वयं स्वमनसा ध्यायन्यि योगीश्वराः ।
वंदे तं हरिवंशहर्षहृदयं श्रीमान् हृदाभ्युद्यताम् ॥९॥

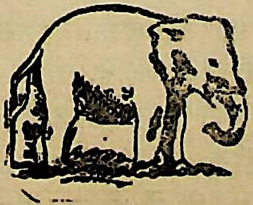

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्री १०८ श्री सुमतिसागर मुनिराज का श्री दिगम्बर जैन बड़े मन्दिर, बाराबंकी में धर्मोपदेश:—

देव श्री अरिहँत का करके मन में ध्यान ।
सुनो ध्यान से कर्मफल भाषी जिन भगवान ॥
नर नारी सँसार के जो चाहें निज कल्याण ।
फलादेश अरि कर्म का भली भांति लो जान ।
दिव्य ध्वनि सर्वज्ञ की सुने भव्य ही जीव ।
अज्ञानी के पाप की नाशि करे दृढ़ नींव ॥

प्रश्न १—कौन कर्म का फल पाने से मानव निर्धन बनता है ।
धन के पीछे निशि दिन भागे, फिर भी याचक रहता है
घोर परिश्रम करने पर भी पैसा हाथ नहीं आता ॥
धन की मृग तृण समान यह तड़प–तड़प मर जाता है ।

उत्तर—दान करे दानी पर उसमें, रोड़ा जो अटकता है ।
चोरी का धन पाकर जग में विषय भोग अपनाता है ॥
रहे दरिद्री ऐसा मानव, पैसा पास न आता है ।
जीवन भर दुःख भोग भोग कर, मर दुर्गति पाता है ॥

प्रश्न २—हों सद् भाव सकल वस्तु का, किञ्चित नहिं भोग सके ।
देखे सबको करे लालसा, विलस सके नहिं छोड़ सके ।
कौन कर्म से ऐसी स्थिति, पापी जीव बताता है ।
भोग्य पदार्थ प्राप्त सभी हैं, फिर भी भोग न पाता है ॥

उत्तर—मुनी जनों की देखा देखी, दान अरुचि से देता जो ।
किसी लोभ ख्याति के कारण, धर्म की नैय्या खेता जो ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इच्छा पूर्ण न होने पर, फिर पीछे पछताता है।
सुख सामग्री मिलने, पर भी, भोग न किञ्चित पाता है॥

प्रश्न ३–कौन दुष्ट कर्मों से प्राणी, पुत्रहीन रह जाता है।
पुनः पुनः शादी करने पर, पुत्र रत्न नहीं पाता है॥

यदि गोद ले किसी का बच्चा, लेते ही मर जाता है।
नहीं लालसा पूर्ण होती, तरस-तरस मर जाता है॥

उत्तर–हरे भरे फल फूल सहित, वृक्षों को जो कटवाता है।
पंचेन्द्रिय जीवों की बलि दे ऊँचे महल बनाता है॥

अबलाओं से भोग करे, फिर उनके गर्भ गिराता है।
ऐसा कामी पुरुष निपूता, आजीवन रह जाता है॥

प्रश्न ४–बांझ रहे जीवन भर स्त्री, ऐसा कौन कर्म करती।
धन यौवन से पूर्ण मगर संतति से वंचित रहती॥

अँगो पांग सभी सुन्दर हो पति प्रेम में पागी हो।
भोगे भोग निरन्तर फिर भी, संतति हीन अभागी हो॥

उत्तर–वेश्या रूप धरे जो नारी, भोले जीव फँसाती है।
गर्भवती होने पर निर्भय, अपने गर्भ गिराती है॥

मद्य मांस का खान पान कर, कुटिल हृदय बन जातीं।
गर्भवती हिरनी को मारे, वही बांझ हो जाती है॥

प्रश्न ५–ऐंचे ताने भिंग्गे काणे, अँधे दृष्टी हीन।
किस कारण से हेप्रभू, नर हो ऐसा दीन॥

उत्तर–दुष्ट भाव से देखकर, पर नारी का रूप।
एक आंख को मीच कर, सैन करे रह मूक॥

ऐंचे ताने होयेंगे, इन कर्मन के काज।
ऐसे दुर्जन की रखे, नहीं विधाता लाज।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रश्न ६–गूँगा हकला घेघला, किस करनी से होय।
सभी अँग सुन्दर बने, मूक कहे सब कोय॥

उत्तर–हँसी उड़ावे जैन धर्म की, शास्त्र कहे सब गप्पे हैं।
भेष दिगम्बर को बतलाते, मन के काले धब्बे हैं।
ऐसे कर्म करे जो प्राणी, पर निंदा का दोषी हो।
ऐसा व्यक्ति बने जो गूँगा, न्याय क्यों इसमें दोषी हो॥

प्रश्न ७–कानों से सुनता नहीं, धन अटूट गृह वास।
बहरा पत्थर सब कहें, निशि दिन रहे उदास॥
ऐसा कारण क्यों बना, सुँदर देह सुडौल।
नक्शा रूप सुहावना, सुनें न बजते ढोल॥

उत्तर–शास्त्र सभा में ऊधम मचाकर अविनय कर सो जाते हैं।
जिन मुनिराज की निन्दा सुन मन फूले नहीं समाते हैं॥
गुप्त वार्ता सुने कान दे, जग में उसकी धूम मचाए।
ऐसे अधम नीच जन बहरे बनें तो इसमें क्या अन्याय॥

प्रश्न ८–कुष्टी होते क्यों मनुज, सतगुरु दो समझाय।
दूर दूर उससे रहे, सारा जन समुदाय॥
देखत मन दूर दुर करे, जिसका घृणित शरीर।
दुर्गन्ध आवे दूर से, मन हो बड़ा अधीर॥

उत्तर–जो जँगल में आग लगावे, हिंसा करे अपार।
स्थावर से पंचेन्द्रिय तक, जीव मरें लाचार॥
जाकर देखो सभी भाइयों, उन जीवों का हाल।
कुष्ट समान घाव देह पर, तड़पे अति बेहाल॥

प्रश्न ९–दाह लगे भस्मक रोगी के; खा पीकर भी तृप्त न हो।
गुरू बता दो कौन दोष से, क्षूधा कभी सन्तुष्ट न हो॥
उत्तर–मुनि आहार जहां लेते हो, अन्तराय जो वहां करे।
पाले हुए जीव को भोजन, नियत समय परजा नहिं दें

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बेचारे बांदी पिंजरे में, भूके प्यासे मूक रहें।
ऐसे प्राणी घोर पाप वश, तन में भस्मक दाह सहें॥

प्रश्न१०–कौन कर्म के फल स्वरूप, युवती नारी विधवा होवे।
सहन करे कटुवैन ननद के, विन पति जीवन सबखोवे॥

उत्तर–सती धर्म का स्वांग रचाती, छुप छुप यार बनाती जो।
पति सँग झूठा प्रेम दिखा, यारों सँग मौज उड़ाती जो॥

प्रश्न११–होय नपुंसक किस कुकर्म से, मिलने पर भी सुँदर देह।
हृष्ट पुष्ट अरु रूपवान है, युवती स्त्री करे न नेह॥
मन मसोस कर रह जाता है, जीवन व्यर्थ लगे हैं सोय।
सारा जीवन रहे निपूता, धन वैभव कितना भी होय।

उत्तर–अश्व सांड आदि पशुओं को, जो बधिया करवाता है।
निर्दयता से क्रुर भाव से, अँड कोष छिद वाता है॥
असह वेदना सही न जावे, वह पीड़ा पहुँचाता है।
निज स्वार्थ में अँधा होकर, ऐसा पाप कमाता है॥

प्रश्न१२–कौन पुण्य से काम देव सम, रूप वान मनमोहक हो।
रूपवती मद् भरी नवोढ़ा, स्त्री का मन विचलित हो॥
रंक राय का भेद न परखे, विवश होय कुछ भी न सुहाय।
खाना पीना सोना छूटे, रूप बसे मन कछु न भाय॥

उत्तर-शुद्ध दूध घी से मानव, नित्य प्रभू का न्वहन करे।
स्वर्ण कलश निजकर में लेकर, जिन मस्तक अभिषेक करे
मलया चन्दन केशर से, अंग प्रभू का स्वच्छ करें।
रूप सलोना काम देव हो, देखत सूरज चांद लजे॥

—(+)—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्री १०८ सुमतिसागर जीं
महाराज का मन्दिर जी में "अभिमान" (घमंड) पर प्रवचन

स्थान:—श्री दिगम्बर जैन बड़ा मन्दिर, बाराबंकी।

धर्म की उत्पत्ति का तीसरा कारण निष्कपट है। जब तक घट में कपट रहता है तब तक घट के पट नहीं खुलते। उसमें धर्म तो कदापि प्रकट नहीं हो सकता। कपटी के व्रत जप तप संयम सब वृथा है। यह ठीक हीहै कि ऊंटकी लीद पर शकरकी चाशनी चढ़ाने वाली बात है, जो हाथ से तो माला फेरता रहता है और हृदय से माला-माल होने का विचार करता है। जो बाहर से भक्ति का भेष और और भीतर से दूसरों पर द्वेष धारण किये रहता हैं वह कपटी अर्थात् ढोंगी धर्म के बदले अधर्म कमाता है।

उदाहरणार्थ:-एक सिंह भूख के कारण महात्मा की चाल फूंक-फूंक कर कदम रखता था जिसे देखकर एक बन्दर सिंह की यह प्रशस्त चाल देखकर बोला:—

नहिं खाड़ा नहिं खोचरा, स्वामी कौन स्वभाव।
अधर-अधर क्यों चलत हो, फूंक-फूंक दो पांव॥

अर्थात् हे स्वामिन् यहां न तो गड्ढे हैं और न जमीन ही ऊंची नीची है फिर आप क्यों फूंक फूंक कर धीरे धीरे अधर पैर रखकर चलते हो उत्तर में सिंह ने कहा:—

परम सनेही साथ छां, ज्यों दूधन में घीव।
अधर-अधर यों पग धरा, रखे मरै न कोई जीव॥

भाई बन्दर-मैने पहले बहुत जीवों की हिंसा कर डाली है, उन

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हिंसाओं सेमेरा आगामी भव बिगड़ जायगा अतः अब मैंने हिंसाका परित्याग कर दिया है अब साधु बन गया हूँ ईश्वर की टोह में अब मैं ऐसा लीन हो गया हूँ जैसे दूध में घी, इसलिए फूंक-फूंक कर अधर-अधर पैर रखता हूँ कि कोई कहीं जीव न मर जाय पैर के नीचे दबकर। यह सुनकर बन्दर कहने लगा कि—

ऐसे हो तो खड़े रहो, पूरो मेरी आस ।
तरुबर के फल तोड़ के, लाऊँ तुम्हारे पास ॥

सिंहराज यदि ऐसा व्रत आपने धारण किया है तो कृपा कर आप खड़े रहें। मैं बढ़िया २ फल तोड़ कर आपकेपास लाता हूँ इस प्रार्थना को स्वीकार कर मेरी आशा को सफल कीजिए। सिंह डरगया बन्दर वृक्ष से मधुर २ फल तोड़ लाया और उन्हें सिंह के सामने रख दिए परन्तु सिंह कब फल खाने वाला था। वह फुर्ती से झपटा और बन्दर को दबोच डाला किसी कवि ने सच कहा है:–

मूरख कपि समझा नहीं, सिंह कैसे फल खाय ।
आते ही धोखे रहा, मुख में लिया उठाय ॥
जब बन्दर हंसने लगा, सिंह पूँछे एम ।
आया काल की दाढ़ में, फिर हंसना है केम ॥

सिंह के मुख में पहुँचते ही बन्दर समझ गया कि वास्तव में यह साधू नहीं है इसने कपट किया है।

अब क्या करना चाहिए ऐसे महात्मा से पिण्ड कैसे छुड़ाया जाय अन्त में बन्दर ने उससे बचने की एक युक्ति खोज निकाली। बन्दर हा-हा-हा-हा करके जोर से हंसने लगा। सिंह को आचर्श्य हुआ वह कहने लगा अरे मूर्ख बन्दर काल के गाल में पहुँचकर भी तू क्यों अटठहास कर रहा है तुझ जैसा मूर्ख तो कोई भी नहीं होगा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तब वन्दर उत्तर दिया, मेरे मन की गुंझ।
मैं हंसता ज्यूं तू हंसे, बात सुनाऊँ तुंझ॥

बन्दर बोला मैं जैसे हंस रहा हूँ तुम भी यदि वैसे ही हंसो तो मैं अपने मन की बात तुम्हें सुनाऊँगा।

सिंह ने कुछ समझा नहीं, मुंह दीना पुलकार।
जिस तरुवर का बानरा, उस पर बैठा जाय॥
अब वन्दर रोने लगा, सिंह पूछत है एम।
गया काल की डाढ़ से, अब रोवत है केम॥

बन्दर के कहने से सिंह मुंह फाड़कर हंसने लगा उसी सम बन्दर फुदक कर वृक्ष की उसी शाखा पर जा बैठा। उसके बाद व रोने लगा जोर २ से, सिंह ने पूछा जब काल के गाल से निकल क बच गए तब अब क्यों रोते हो बन्दर बोला—

रोऊँ तुम सम साधु जी, भोरा मिल सी आय।
जणीं दिशा का साधु जी, वणी दिशा में जाय॥

तुम सरीखे कपटी साधु के नाम पर रो रहा हूँ कि कहीं औ कोई भोला जीव तुम्हारे इस कपट जाल में न फंस जाये। आप जिध से आए हो उधर हीं कृपा कर वापस पधार जाइए।

॥ निरभिमानता ॥

निरभिमानता में धर्म का रहस्य छिपा हुआ हैं। अभिमा में धर्म का रहस्य छिपा हुआ है। अभिमान में धर्म के नाश प्रतिच्छाया छिपी हुई है। नम्रभाव छिपी हुई है। नम्रभाव या ग रहित उसी में होगी जो ईश्वर के निकट पहुंचने का प्रयत्न कर है। वही कुलीन और जाति वान है जिसमें अभिमान का अभा हो। कवि कहता है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नमे सो अम्बा इम्बली नमे सो दाड़िम दाख।
आक विचारा क्या नमे, जिसकी ओछी साख॥

टहनियों में फल लगने से आम, इमली, अनार, दाख नम्र हो नीचे झुक जाते है। पर क्या पामर आक कभी नमता है। वह तो नमने से चटाक से टूट जाता है। इसी प्रकार जो उच्च जातीय कुलीन होते हैं उनमें स्वाभाविक नम्रता विद्यमान रहती है जिनके हृदय में नम्रता नहीं वह आक का साथी है अभिमानी का सिर सदा नीचा रहता है, क्योंकि उसे लज्जित होना पड़ता है और वह कभी विजय प्राप्त नहीं कर सकता।

एक समय की बात। राजा भोज अपने पण्डितों की मण्डली में बैठे थे उस समय एक पंडित अभिमान के नशे में चूर होकर कहने लगा महाराज एक दोहा बड़ा बढ़िया है और उसके भाव भी बहुत अच्छे हैं वह दोहा यह है—

मर्द तो है मूँछ बाँका, नन वाँकी गोरिया।
गाय तो है सींग बाकी, रंग बांकी घोरिया॥

पन्डित मन्डली और महाराज भोज के बीच यह बर्ता चल रहीथी कि उसी समय भेड़ चराने वाला एक गड़रिया भेड़ लिये उधर से गुजरा। उसे भी उपरोक्त लिखित दोहा सुनाई पड़ा वह मामूली पढ़ा लिखा था। यह दोहा उसे बहुत अखरा। अतः वह यह कहता हुआ आगे बढ़ा।

चल म्हारी टूटी, यह चारों बाताँ झूँठी॥

राजा भोज ने यह दोहा सुनातो गड़रिये को बुला लाने की आज्ञा दी। गड़रिया सभा में लाया गया। राजा भोज ने उससे पूँछा कि तुम इन चारों बातों को झूठी कैसे कहते हो तो गड़रिये ने कड़क कर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अपनी बात को सच साबित करते हुये कहा:-

यह पंडित है बड़ा अनाड़ी, इसके मारूँ खींच कुल्हाड़ी।
इसने सारी सभा बिगाड़ी, मुख से झूँठी बातां काढ़ी॥

हे महाराज किसी मर्द की मूँछें तो बांकी पर यदि उसके कार्य पशु से भी नीच हैं तो उसकी मूँछें किस काम की। यदि स्त्री की आंखें तिरछी कटाक्ष करने वाली हैं और वह कुल्टा है तो उसकी आंखें किस काम की। यदि गाय की सींग तो बांकी और दूध नहीं देती तो सींग का बांकपन किस काम का। ऐसे ही अगर घोड़ी की चाल गधी सरीखी निकम्मी है तो उसका रंग किस काम का है। इस लिए हे महाराज ! अब आप ही स्वयं बिचार सकते हैं कि उपरोक्त चारों बातों में कहां तक सत्यता है हे पृथ्वीनाथ यह चारों बातें इस प्रकार असत्य हैं। अब जो सत्य है उसे सुनें :-

मर्द तो रण शूर बांका, शील बांकी गोरिया।
दूध है तो गाय बांकी, चाल बांकी घोरिया॥

भावार्थ:-मर्द वही है जो युद्ध के समय अपनी शूर बीरता से शत्रुओं के छक्के छुड़ा देता हो। स्त्री वहीं है जो शीलवती हो गाय वही है जो दूध देती हो। घोड़ी वही अच्छी है जिसकी चाल अच्छी हो। गड़रिए का यह व्याख्यान सुनकर महाराज भोज बहुत प्रसन्न हुये। यह तो एक उदाहरण है तात्पर्य यह है कि उस पंडित ने अभिमान किया था। अत: उसे अपमान सहन करना पड़ा। इस प्रकार अभिमान में अधर्म और निरभिमानता में धर्म है। जो अभिमान त्याग कर जितना नम्र बनता चला जाता है वह उतना ही उच्च पद प्राप्त करता है। में-में करने वाले बकरे का गला काटा जाता है, मैंना कहने से मैंना का चाव और लाड़ प्यार से पालन किया जाता है इस लिए निरभिमानता में ही धर्म है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विजयार्ध पर्वत के स्थालक नगर के राजा अमित बेग की पुत्री मणिमती विद्या सिद्ध करने में तत्पर थी उसे देखकर चंचल रावण ने काम और मोह के वश हो गया कन्या को अपने वश में कर ली मणिमती की विद्या हरण कर ली वह १२ वर्ष से उपवास कर निदान वांध लिया कि अगले भव में इससे बदला लू सो मन्दोदरी के पुत्री उत्पन्न हुई नाम सीता रखा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्री १०८ पूज्य मुनिराज

श्री सुमति सागर जी महराज का त्याग धर्म के दिन दिया गया सन्देश

स्थानः–श्री दिगम्बर जैन बड़ा मन्दिर, बाराबंकी।

भगवान आदिनाथ के जीव ने बज्र जंघ और श्रीमती रानी की पर्याय में जो मुनियों को आहारदान दिया था उसकी रतिवर कबूतर और रतीवेगा कबूतरी ने अनुमोदना की थी उसी के पुण्य प्रभाव से वे दोनों मरकर उत्तम भोग भूमि में उत्पन्न हुए और कल्पवृक्ष से ऐच्छिक सामग्री का भोग किया पश्चात वे दोनों भोम भूमि की आयु पूर्ण कर स्वर्ग में गए और वहां सेचय कर विजयार्ध पर्वत पर गंधार देश की सुसीमा नगरी के अधिपति आदित्यागति राजा के रतिवर का जीव हिरण्य वर्मा नाम का पुत्र हुआ। और रतिवेगा कबूतरी का जीव भोगपुरी नगरी के स्वामी राजा वायुरथ के प्रभावती नाम की कन्या हुई।

अनन्तर हिरण्य वर्मा और प्रभावती का विवाह हो गया। वहां पर उन्होंने विद्याधरों के प्रचुर वैभव को भोगा और पुनः दोनों स्वर्ग में गये। और वहां पर स्वर्ग के वैभव का उपयोग करके जय कुमार और सुलोचना हुए।

जयकुमार बड़ा शक्तिशाली राजा था जिसको भरतेश ने अपने सेना का अधिपति बनाया था उसने अपने बल से मेघ कुमार देव तक पर विजय प्राप्त की। सामान्य पुरुषों को भी दान के प्रभाव से क्या नहीं प्राप्त होता है। राजा अकंपन की पुत्री सुलोचना भी बड़ी सुन्दरी हुई जिसके लिए अनेक देश के राजा स्वयंवर में वर ने को आये थे। भरतेश पुत्र तक ने भी जिसके लिए पूर्ण प्राप्त का प्रयास

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

किया था उसका पिता भी महा मान्य भरतेश तक से सम्मानित हुआ था दान की अचिन्त महिमा है।

दान से मनुष्य क्या उपयोग प्राप्त नहीं करते अर्थात सब कुछ करते हैं।

सत्पात्रोप गतेदानम् सुक्षेत्रे गत बीजवत्
फलाय यद्दपि स्वल्पं तद् कल्पाध कल्पते

सत्पात्र में गया दान अच्छे स्थान में बोए हुए बीज के समान सफल होता है। दान की बड़ी भारी महिमा अन्यत्र भी कही है।

दान बिना नंहि मिलत है सुख सम्पति सौभाग्य
कर्म कलंक खपाय कर पावै शिव पदराज

दान से ही संसारी जीवों को महान सुख की प्राप्ती होती है। दानी जीव ही संसार में महान यश को प्राप्त करता है। कहां तक कहा जाय इस संसार में दान के प्रभाव से ही जीव अत्यन्त दुर्लभ भोग भूमि के सुख देव विद्याधर प्रति नारायन तथा चक्रवर्ती और वासदेव आदि के पद प्राप्त करता है। इस दान के प्रभाव से शत्रुता छोड़ कर अपना हित करने लगते हैं। अनंत शत्रु दान के प्रभाव से मित्र रूप हो जाते हैं।

श्रेयांस राजा के घर जब आदीश्वर स्वामी का आहार हुआ तो प्रथम इन्द्र ने दाता की प्रशन्सा की थी पीछे दान की पश्चात् आदीश्वर भगवान की जो कि उत्तम पात्र थे। इन्द्र की प्रशंसा के शब्द इस प्रकार थे।

"धन्य दानी अरु धन्यदान अरु धन्य है आदीश्वर भगवान अर्थात हे भव्य जीवो यहां पर प्रथम दानीको धन्यवाद दिया गया और फिर दान को अनंतर आदीश्वर महाराज हैं उनको धन्यवाद दिया गया है।

—(+)—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्री १०८ पूज्य मुनिराज

श्री सुमति सागर जी महराज का भावना पर प्रवचनसार।

यदि सच्चे मनुष्यत्व का निर्माण करना है तो भावनाओं को जीवन में उतारो।

प्रत्येक प्राणी का उत्थान और पतन उसकी भावनाओं पर निर्भर है। सद्भावनाओं से वह ऊँचा उठता है और असद्भावनाओं से वह नीचे गिरता है। भावना का उत्थान ही मनुष्य का उत्थान है और सद्भावना से गिरना ही मनुष्य का पतन है। वास्तव में देखा जाय तो भाव के अतिरिक्त मनुष्य और है भी क्या ? मनुष्य भावना में ही तो है। जीवन-निर्माण में भावना का कम महत्व नहीं है। तीर्थंकर प्रकृति ऐसे महान पुण्य का बन्ध भावना से ही होता है इसी से हम उसकी उपयोगिता और महत्व अच्छी तरह समझ सकते हैं।

भावना से पदार्थ की वास्तविक स्थिति मनुष्य के समाने आ जाती है। जब विवेकी मनुष्य अनित्य अशरण आदि भावनाओं का अभ्यास करता है तब उसे संसार के शरीर भोग आदि अविकारता एवं हेयता स्पष्ट प्रतीत होने लगती है इस लिए कहा है कि अपने आत्मा का हित चाहने वाले मनुष्यों को अनित्य आदि बारह भावनाओं को अपने जीवन में उतारना चाहिए सच्चे मनुष्य का निर्माण करना है तो भावनाओं को जीवन में उतारो। अर्थात सुख की प्राप्ति चाहते हो तो भावनाओं का अवलम्ब लो। क्यों

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कि भावना भवनाशनी। भावना भव का नाश करने वाली है। यदि भव को नष्ट करना चाहते हो तो भावना मय बनो भावना मय बनने, भावनाओं में घुल मिल जाने में ही मनुष्य का कल्याण है। ज्यो ज्यों भावना दृढ़ होती ज़ाती है त्यों त्यों वह आगे बढ़ता जाता है और आत्मिक अक्षय सुख के निकट पहुँच जाता है।

कोई साधु जीवन यदि भावनाहीन व्यतीत हो तो उसे साधु जीवन कहना संङ्गत नहीं। साधु पद पर प्रतिष्ठित होने के लिए जो भी कुछ विरोध तथा महत्ता आनी चाहिए वह भावना के बिना आ ही नहीं सकती। साधु ने संसार शरीर आदि को अनित्व और अशरण समझ कर ही तो छोड़ा है।

यदि वह उन भावनाओं को जीवन में दृढ़ न करें तो उसकी फिर संसार और शरीर में आस नहीं हो सकती है और यदि ऐसा हुआ तब तो उसका घोर पतन हो जायगा। इसलिए उसे बहुत सम्भल कर रहना होगा। योग और क्षेम दोनों को साथ ले कर चलना होगा जो अनिश्चलता प्राप्त है उसे पाना और पाईहुई अनिश्चलता की रक्षा करना ही यही साधु का योग क्षेम है। भावनाओं से ही वह इन दोनों चीजों को पाता है। भावनाएँ न हो तो न प्राप्त हुआ कुछ भी सुख कभी भी प्राप्त न हो सकेगा और तब प्राप्त की रक्षा असंभव रहेगी।

अतएव योगियों को आचार शास्त्र में भावनाओं का वर्णन बहुत ही आवश्यक समझ कर वैराग्य की जननी द्वादश भावनाओं को अपने में उतारना चाहिए।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अज्ञानी प्राणी थोड़ा साधन पालता है तो अभिमान से फूला नहीं समाता वह अपने आपकी स्थिति को भूल जाता है। मदिरा के पीने पर नशा चढ़ा करता है किन्तु धन को पा लेने मात्र से ही उसमें उससे भी हजार गुणा पागलपन आ जाता है। उसे एक ऐसा रोग उत्पन्न हो जाता है जिससे आंख होते हुए भी वह देखता नहीं, कान होते हुए भी सुनता नहीं और मुंह होते हुए भी बोलता नहीं, वह धर्म कर्म छोड़ देता है व्यसनी बन जाता है। परन्तु वह कभी नहीं सोचता कि लक्ष्मी कितने समय टिकने वाली है। यह तो चन्चला है, आज तक किसी के पास नहीं टिकी। पुण्योदय से यदि इसका समागम हुआ है तो मैं इसे शुभ कार्यों में खर्च करके इससे पुण्य की नवीन ज्योति प्रकाशित करूँ। वह उसे पाप के कार्यों में खर्च कर अपने आगे के मार्ग में कांटे बोता है, या यह मुझे बाद में काम आवेगी इस विश्वास से ठगाया जाकर गुलाम की तरह उसकी रक्षा करने में लगा रहता है। अन्त में उसे अपना या लक्ष्मी का वियोग होते देख दुखी होना पड़ता है। और रोना पड़ता है आर्त ध्यान से प्राण गंवाने पड़ते हैं, परन्तु ज्ञानी को लक्ष्मी की अनित्यता का अनुभव करने वाले को, इस प्रकार का दुःख नहीं होता, न उसे लोभ सताता न तृष्णा न वह मद से उद्धत होता है और न इसके लिए दूसरे को सताता है अतः वह अस्थाई सम्पत्ति से स्थाई स्वार्थ सिद्ध करता है, दानादि सत्कार्यों में उपयोग कर स्वपर का हित साधन करता हैं। भव्य पुरुष ही चारों प्रकार का दान देकर अपनी चन्चला लक्ष्मी का सदुपयोग करता हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्रावक के नित्य पालने योग्य आवश्यक नियम

नियम पहला।

सम्यक्त्व-प्रतिज्ञा

मैं, १- श्रीअरहंतदेव, (जो सर्वज्ञ, वीतराग और हितोपदेशी ऐसे तीन गुण सहित हैं) २-श्रीनिर्ग्रन्थ गुरू (जो परिग्रह रहित ज्ञान-ध्यान-तप में लीन हैं) ३-श्रीकेवली भगवान् का कहा हुआ धर्म जो) सर्व प्राणियों की दया रूप और स्वरूप सुखमयी है) इन तीनों की श्रद्धा करता हूँ। इनके सिवाय किसी दूसरे देव, गुरू और धर्म को सच्चा नहीं समझूँगा। इनकी प्रतीत दृढ़ रखने के लिए नीचे की भांति कार्य करूँगा।

क—एक णमोकारमंत्र की माला रोज फेरूँगा। यदि रोगादिक हो जाय तो छूट, तो भी यथा शक्ति जपूँगा।

ख—श्रीजिनप्रतिमा का दर्शन रोज करूंगा यदि रोगादिक होने या परदेश में जिन मंदिर जी के न होने के कारण दर्शन न बन सके तो पूर्व और उत्तर की ओर मुंह करके परोक्ष रीति से दर्शन करूँगा और वही स्तुति पढूँगा जो प्रतिमाजी के समाने प्रत्यक्ष में पढ़ा करता हूँ। यदि बेहोश और अशक्त होऊं तो क्षमा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ग—शास्त्र स्वाध्याय*रोज करूँगा और सुनूंगा यदि रोग सूतक पातक या परदेश गमन में न बन सके तो छूट ।

मिती
ता० द० नियम कर्ता—

नियम दूसरा ।

१—स्थूल-अहिंसा-अणुव्रत ।

१-मैं त्रस संकल्प करके जीवों की अहिंसा नहीं करूगा, आरम्भ परिग्रह में हो उसकी छूट ।

२-मैं मांस की डली (टुकड़े) को नहीं खाऊंगा ।

३-चमड़े के बरतन में रक्खा घी, तेल नहीं खाऊंगा

४-मैं मदिरा (शराब) नहीं पिऊँगा । क्यों कि इसके बनाने में अनेक त्रस जीवों का घात होता है और यह चित्त को अज्ञानी बनाती है ।

५-मैं अफीम, गाँजा, चरस, भाँग को न खाऊँगा और न पिऊँगा क्योंकि ये आत्मा के स्वभाव को बिगाड़ते हैं, किन्तु औषधि के वास्ते छूट ।

६-मैं तम्बाकू नहीं पिऊँगा और न बीड़ी (चुरूट) पिऊँगा, क्यों कि ये दोनों कलेजे को जलाते हैं ।

---

*शास्त्र को पूरा पढ़ना या सुनना चाहिए, उससे धर्म का लाभ होगा । यदि किसी दिन जरूरी काम हो, तो एक लकीर ही बाँचना या सुनना उचित है ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

७–मैं मधु (शहद) नहीं खाऊंगा, क्योंकि इसके कारण असंख्यात चौ इन्द्री मधुमक्खियों का घात होता है।

८–मैं पशु, पक्षी, मछली आदि जीवों का शिकार नहीं करूंगा।

मिती

ता० द० नियमकर्ता—

नियम तीसरा।

२—स्थूल—सत्य—अणुव्रत।

१–मैं अपने और दूसरे के विषय–कषायों की पुष्टि या उसके लिए धनादिकी प्राप्ति के वास्ते झूठ नहीं बोलूंगा। व्यापार में वस्तु का मूल्य अपनी इच्छानुसार माँगूंगा, परन्तु जब कोई खरीद के दाम पूछेगा तो सत्य कहूँगा।

मिती

ता० द० नियमकर्ता—

नियम चौथा।

३—स्थूल–अचौर्य्य-अणुव्रत

१–मैं ऐसी चोरी नहीं करूंगा और न कराऊँगा, जिससे मुझे राजा और पंच दंड दे सके।

२–मैं जिस माल को मन में समझूँगा कि चोरी का है उसे नहीं खरीदूंगा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

३–मैं राजा का महसूल, रेल के टिकट का दाम और माल
किराया आदि नहीं छिपाऊँगा।

४–मैं अपने लेन देन में तौल के बांट एक सरीखे ठीक रखूँग

५–मैं सच्ची में झूठी, या बढ़ती में कमती मूल्य की चीज मि
कर सच्ची और बढ़िया कह करके नहीं बेचूँगा।

मिती–

ता०

द० नियमकर्त्ता

—(※)—

नियम पांचवां

४—स्थूल–स्वस्त्रीसन्तोष-ब्रह्मचर्य–व्रत।

(यह व्रत पुरुष को स्त्री के सम्बन्ध में और स्त्री को पुरु
सम्बन्ध में लेना उचित है)

१–मैं अपनी विवाहित स्त्री (या पति) के सिवाय अन्य
या पराई स्त्री के साथ मैथुन सेवन नहीं करूँगा।

२–मैं अपनी स्त्री (या पति) के साथ में एक माह में इतने(
दिन काम–सेवन करूँगा, और अष्टमी चतुर्दशी को नहीं क

३–मैं जो काम सेवन का अङ्ग है उसको*छोड़कर अन्य
भी अङ्ग से काम सेवन न करूँगा।

---

* पुरुष और स्त्री के मूत्रस्थान को छोड़कर अन्य अङ्ग
सेवन करना मना है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

४–में इतने(   )वर्ष तक–जब तक मैं विद्या पढ़ता हूँ, ब्रह्मचर्य अर्थात् किसी प्रकार अपने वीर्यको नष्ट नहीं करूँगा, क्योंकि विद्या का लाभ ब्रह्मचारी को सहज में होता है।

५–मैं इतने (   ) बर्ष की अवस्था के पहले विवाह न करूँगा, क्योंकि बाल्यावस्था का※विवाह बहुत हानिकारक होता है।

६–मैं इतने (   )वर्ष* के ऊपर अपनी स्त्री के मरने पर फिर बिवाह न करूँगा।

७–मैं वेश्या नृत्य न करूँगा और न देखूँगा।

मिती–

ता०   द० नियमकर्ता

+

नियम छठा।

५—स्थूल–परिग्रहप्रमाण–व्रत।

१–क्षेत्र–मैं उघाड़ी तथा खेती के योग्य इतनी बीघा जमीन(   ) रखता हूँ।

२–वस्तु–मैं घर, कोठी, बाग कारखाने, गोदाम आदि इतने (   ) रखता हूँ, इनसे अधिक न बनाऊँगा, पर किराया ले सकता हूँ।

---

*पुत्र रहित को ४५ और पुत्र सहित को ४० वर्ष के ऊपर ब्याह न करना चाहिए।

※१६ वर्ष से कम लड़का और १२ वर्ष से कम की लड़की का विवाह बाल विवाह है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

३-हिरण्य—मैं चांदी इतने मन (   ) तथा रुपया पैसा आदि धन इतना (   ) रखता हूँ। इससे ज्यादा पैदा करूंगा तो उसे धर्म कार्य में खर्च करूँगा।

४-सुवर्ण मैं सोना इतने (   )तोला तथा सब जड़ाऊ आभूषण गिनतीमें इतने (   ) रखता हूँ।

५-धन—मैं दूध देने वाले गाय भैंसादि पशु इतने(   )रखता हूँ तथा सवारी के लिये घोड़े बैल इतने (   ) रखता हूँ।

६-धान्य—मैं इतनी (   )जातिका धान्य रखता हूँ तथा अपने भोजन खर्च के लिए इतने*(   )मास.ते अधिक का संग्रह नहीं करूंगा।

७-दासी-मैं इतनी (   ) दासियों से अधिक कामकाज के वास्ते नहीं रखूंगा।

८-दास—मैं इतने (   )दास से अधिक नहीं रक्खूंगा।

९-कुप्प—मै रुई आदि जातियों के वस्त्र इतने (   ) जोड़ से अधिक अपने पास नहीं रक्खूगा।

१०-भांड—मै सब धातु या इतनी (   ) धातुओं के बरतन तौल में इतने (   ) मन और गिनती में इतने (   )रखता हूँ। इससे अधिक कोई समय काम में ना लाऊंगा।

मिती—

ता०

द० नियमकर्ता

---

*एक महीने के खर्चे से ज्यादा अनाज घर में रखना ठीक नहीं कारण घुन लग जावे तो खाना पड़े।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नियम सातवां।

६—स्थूल-दिक्परिणाम-व्रत।

मैं चारों दिशाओं में-हरेक में इतनी इतनी (   ) मील तक और चारों विदिशाओं में हरेक में इतनी इतनी (   ) मील तक और ऊपर इतनी इतनी (   ) दूर तक नीचे इतनीं (   ) दूर जाऊँगा पर धर्म कार्य के वास्ते सब जगह जा सकता हूँ। इसके सिवा पत्र व्यवहार, कोई चीज वस्तु मँगाना या आदमी भेजना आदि में कर सकूंगा।

मिती

ता०

द० नियमकर्ता—

नियम आठवां।

७—स्थूल-दिशापरिमाण-व्रत

ऊपर के दिग्व्रत में जितना परिणाम किया है उसमें से रोज रोज का दशों दिशाओं में जाने का प्रमाण इतने (   ) रोज के वास्ते प्रतिदिन इतनी (   ) मील रखता हूँ।

मिती

ता०

द० नियमकर्ता—

❋

नियम नवमां।

८—स्थूल-अनर्थदंड-व्रत।

मैं जूआ (द्यूत) रुपया पैसा आदि बद के नहीं खेलूंगा।

मैं बिना प्रयोजन जमीन न खोदूंगा, पानी न ढोलूँगा, हवा न लूँगा। अग्नि न जलाऊंगा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

३–मैं दूसरे को अन्याय मार्ग पर चलने का उपदेश नहीं दूंगा।

४–मैं विष आदि खाकर या और किसी तरह अपना अपघात न करूँगा और न दूसरे को ऐसी वस्तुएं दूंगा।

५–मैं अपने २४ घंटों का नियम बना लूँगा और बे मतलब स्त्री, राज, चोर और भोजन कथाओं में न प्रवर्तन का खयाल रक्खूँगा यदि कारण बश हो तो छूट।

६–मैं किसी के मरण होने का शोक (बिछौना) पातक के दिनों से ज्यादा नहीं पालूँगा अर्थात १२ दिन रक्खूँगा।

मिती

ता० द० नियम कर्ता—

नियम दसवां।

६—स्थूल-सामायक-व्रत।

दिन ऊगते, दो-पहर और सांझ इन तीनों समयों में से किसी समय कम से कम एक दफे रोज दो घड़ी अर्थात ४८ मिनट अथवा इतने (   ) मिनट सामायिक करूंगा। यदि रोगादिक असाध्य कारण से न हो तो छूट।

मिती

ता० द० नियमकर्ता—

नियम ग्यारहवां।

१०—स्थूल-प्रोषधोपवास-व्रत।

मैं प्रति अष्टमी और चतुर्दशी को अपनी शक्ति के अनुसार एक उपवास या एकासन, और एक बार जल, इस भांति करूंगा और उस दिन यदि नौकर न होऊँगा तो अपना समय धर्म ध्यान में बिताऊँगा।

मिती

ता० द० नियमकर्ता—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नियम बारहवां

१—स्थूल-भोगोपभोग परिमाणव्रत।

भोजने १ षट्रसे २ पाने ३ कुङ्कुमादि विलेपने ४ पुष्प ५ ताम्बूल ६ गीतेष ७ नृत्यार्दो ८ ब्रह्मचर्यं के ९॥ स्नान १० भूषण ११ वस्त्रदौ १२ वाहने १३ शयना १४ सने १५। सचित्त वस्तु १६ संख्यादौ १७ प्रमाणंभजप्रत्यहं मैं १७ नियम रोज करूँगा १।

नाम	कितनी दफे	परिमाण तौल	कितनी सङ्ख्या
१ भोजन–			
२ षटरस, दूध, दही, तेल, घी, मीठा नोन–			
३ पान (पीने) की वस्तु			
४ कुंकुमादि विलेपन-सुगंधतेल का लेपादि			
५ पुष्प-फूल सूंघना–			
७ गीत संसारीगान नाटकादि			
८ नृत्य संसारीं नृत्य			
९ ब्रह्मचर्य काम सेवन			
१० स्नान			
११ वस्त्र			
१२ आभूषण			
१३ वाहन हाथी घोड़ा बैल आदि			
१४ शयन शय्यादि			
१५ आसन चौकी, कुर्सी, फर्स आदि			
१६ सचित (नीचे लिखी में से हर का) प्रमाण करना			
१७ अन्य वस्तु–*			

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१–इन नामों के आगे संख्यादि पेन्सिल से लिखना चाहिए। दूसरे दिन जो सुधारना हो रबरसे मिटाके फिर पेन्सिल से लिख देना चाहिये

*१७ वें नियम में संदेह है। कोई २ दिशाओं में भ्रमण का प्रवाण कहते हैं किन्तु वह देशव्रत में आ जाता है।

हरी तरकारियों के नाम

(जो रखना हो उस पर पेन्सिल से निशान कर दो)

फल

१ गोंदी	१५ कमरख	२९ गुलाब जामुन
२ खजूरे हरे	१६ ईख (सेलड़ी)	३० जांबू सफेद
३ खरबूजा	१७ पपीता	३१ हरी बादाम
४ केला	१८ बेर	३२ आड़ू
५ अमरूद	१९ फालसे	३३ विही
६ नारंगी	२० खिरनी	३४ लीची
७ फूट	२१ चकोतरा[पपनूभ]	३५ मोरसिरी
८ सिंघाड़े	२२ मीठानीबू[मोसमी]	३६ सहतूत
९ जामुन	२३ सेव[सफरचन्द]	३७ लखवट
१० फरेंदे	२४ अनार[दाड़िम]	३८ बेलफल
११ आम	२५ अंगूर [द्राक्ष]	३९ मूगफली हरी
१२ नासपाती	२६ शरीफा[सीताफल]	४० रामफल
१३ नारियल	२७ कमलगट्टा	
१४ अनानास	२८ तरबूज[कलिंगड़]	

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सागादि

१ ककड़ी	२० ग्वारफ्ली	३६ चोले की भाजी
२ भिंडी	२१ कंटोला	४० गुलाब का फूल
३ तुरई	२२ सरगवा की सींग	४१ पेठा
४ परवल	२३ डाँगर सींग	४२ करौंदी
५ आंवला	२४ कौठिम्बा साग	४३ सेकटेकी सींग।
६ इमली हरी	२५ मोगरी साग	४४ तिनधारी
७ विराजाफल	२६ टिंडोरा	४५ पोई के पत्ते
८ लसोड़े	२७ तुअर की फली	४६ मोगरा
९ नींबू [फली]	२८ मैथी का साग	४७ चेल की भाजी
१० भुट्टा [मकई]	२९ धनिये का साग	४८ बबूल की दातोन
११ सेम [बालोर]	३० गॉदल साग	४९ कालीमिरच हरी
१२ हरे चना [बूट]	३१ आलू के पत्ते	५० कचनार
१३ खीरा [चिभड़ा]	३२ नागर वेल पान	५१ पालक का साग
१४ करेला	३३ बाजरे की बाल	५२ कुलफे का साग
१५ हरी मिर्च	३४ ज्वार के दाने	५३ गलफे का साग
१६ लौकी [दूधी]	३५ हरे गेहूँ	५४ ढाक का पत्ता
१७ कद्दू [कोंल्हा]	३६ नीम का दतौन	५५ आवुबा
१८ मटरफली [बटाना]	३७ हरीमको	५६ पुदीने का साग
१९ लोभिये [चौलीकी]	३८ हरी कासनी	५७ मीठालिंबड़ा (नमि)

मैं रात्रि को खाद्य (जिससे पेट भरे), स्वाद्य (पान, इलायची स्वाद की वस्तु), लेप (चाटने की चीजें), पेय (पीने की वस्तुएें) इन चारों को या इनमें से इतनी (   ) का त्याग करता हूँ।

३—नीचे लिखे अभक्ष्यों के त्याग का नियम करता हूं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१-पानी छानकर पीऊँगा ।

२-विदल अर्थात दही में दो दाल होने वाले अन्न या मेवा मिलाकर न खाऊँगा।

३-रातवासी तरकारी, आचार, पूरी, भात दालादि न खाऊँगा

४-मैं बड़-फल, पाकर फल, पीपल फल, ऊँमर-फल, कठूंमर-फल ऐसे पांच उदम्बर फल नहीं खाऊँगा।

५-आठ पहर के भीतर की मिठाई या पकवान (जिनमें जल का अन्श हो) खाऊँगा ।

६-मैं आलू, घुइयां आदि कंदमूल नहीं खाऊंगा ।

७-मैं तुच्छ और अजान फल नहीं खाऊंगा ।

८-मैं जिस बस्तु या तरकारी का स्वाद और का और हो जायगा उसको नहीं खाऊंगा ।

मिती-

ता० द० नियमकर्त्ता

—(❀)—

नियम तेरहवां

१२—अतिथि-संविभाग-व्रत ।

१-मैं सबेरे अपनी रसोई में से नीचे लिखे में से किसी को जिमाकर भोजन करूँगा ।

इनमें से कोई यदि न मिलेगा तो एक मनुष्य के योग अन्न

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निकाल पीछे किसी को दिलादूंगा।

मुनि, क्षुल्लक, ब्रह्मचारी, अर्जिका, व्रती श्रावक, गरीब जैनी (धर्म का श्रद्धानी), अनाथ स्त्री, अनाथ वृद्ध मनुष्य, अनाथ बालक, अन्धा, या अन्य असमर्थ पुरुष।

२—मैं दान की प्रवृत्ति के लिए अपने पास एक गोलक रक्खूगा जिसमें कुछ न कुछ रोज डालता रहूँगा। साल के अन्त में उसे विद्या दानादि में खर्च कर दूँगा।

मिती

ता० द० नियमकर्ता–

इति

—※—

सूचना

ऊपर जो नियम दिखलाये गये हैं वे केवल इस वर्तमान काल में भाइयों की प्रति नियम धारने की तरफ खीचने के लिए हैं, दर्शन प्रतिमा और व्रत प्रतिमा के ख्याल से नहीं।

तथापि ऊपर के नियम धारियों को भी अपने नियमों की मजबूती के लिए पांच अणुव्रतों की २५ भावनायें और २५ अतीचार जरूर जान लेने चाहिये और उनका ख्याल रखते हुए अपनी शक्ति भर दोष बचाने चाहिए। सब दोष प्रतिमाधारी ही बचाते हैं।

२५ भावनाएँ।

१—अहिंसा की पांच,

१-बचन मेरे काबू में रहें, २-मन मेरे अधीन रहे

३-जमीन देखकर चलूँ ४-चीज वस्तु देखकर उठाऊँ और धरूं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

५-भोजन-पान देखकर करूँ।

२—सत्य की पांच-

१-क्रोध न होने दूं २-लोभ (हद से बाहर लालच) न होने दूं

३-भय न करूँ ४-हास्य से बचता रहूं

५-अपने वचन जिन वाणी के अनुसार कहता रहूँ।

३—अचौर्य के पांच-

१-सूने (प्राणी या वस्तु रहित) घर में जाऊं या बैठूँ

२-छोड़े हुए (उजाड़) स्थान में जाऊं या बैठूँ

३-जहां कोई रोके वहां नबैठूँ ४-भोजन में अशुद्धता को न छिपाउं

५-साधर्मी भाइयों से लड़ाई झगड़ा न करूँ।

४—स्वस्त्री संतोष की पांच-

१-स्त्रियों में राग पैदा करने वाली कथा न बांचू न सुनूँ,

२-स्त्रियों के सुन्दर अङ्गों को न देखूँ

३-पहले भोगे हुए भोगों को न चितारूं

४-पुष्ट (हद से बाहर काम को पैदा करने वाले) रस न खाऊँ

५-अपने शरीर का श्रृङ्गार न करूँ (ऐसा कि जिसको दूसरा देख विकार मन में लावे)।

५—परिग्रह प्रमाण की पांच-

१-कान २-आंख ३-नाक ४-मुंह और ५-स्पर्श इनके विषय रूप अच्छी या बुरी जो वस्तुएं मिले उनमें राग द्वे न करूँ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२५—अतीचार

अहिंसा के पांच—

१-बेंत, चाबुक; लाठी से मारना २-रस्सी आदि से बांधना ३-आंख, नाक, कान, मुंह छेद डालना ४-हद से ज्यादा बोझ लाद देना ५-अपने अधीन वालों को भोजन पान ठीक परिणाम और नियत समय पर न देना ।

२—सत्य के पांच

१-मिथ्या, अर्थात कुमार्ग पर ले जाने वाला उपदेश देना,

२-स्त्री पुरुषों (पति पत्नी) की एकान्त में की हुई चेष्टा को गुप्त-रीति से जानकर प्रगट करना,

३-ठगने के वास्ते झूठ गवाही देना या झूठा कागज लिखना,

४-किसी की अमानत रकम को अपने से वह अगर भूल से कम मांगे तो उसको कहना कि तुम्हारी रकम जितनी है ले जाओ, ठीक रकम छिपा कर झूठ बोल देना,

५-दूसरों की अकेले की बात चीत का भेद दूर से उनके चेहरे वगैरह से जानकर जाहिर कर देना ।

३—अचौर्य के पांच,

१-दूसरे को चोरी की प्रेरणा करना या उपाय बताना, या आप दूसरे के कहे से चोरी कराना;

२-चोर की लाई वस्तु को थोड़े दाम में खरीदना, या बहु मूल्य वस्तु थोड़े दाम में बेचना

३- राज्य की आज्ञा उल्लंघन करना,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

४-तौलने मांपने के बांट कमती बढ़ती रखना,

५-खरी में खोटी वस्तु मिलाकर उसे खरी कह कर बेचना।

४—स्वस्त्रीसंतोष के पांच,

१-अपने पुत्र पुत्री को छोड़कर दूसरों का विवाह करना,

२-व्यभिचारिणीं स्त्रियों से बातचीत करना,

३-काम के अङ्ग को छोड़ दूसरे अङ्गों से काम-सेवन करना,

४-काम सेवन के तीव्र भाव रखना।

५—परिग्रहप्रमाणव्रत के पांच,

इस प्रकार परिग्रह के पांच जोड़े हुए उनमें जो जो परिणाम किया होउस से ज्यादा लालच वग़ैरह बढ़ा लेना।

॥ इति ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

卐 सामायिक चालीसा 卐

दोहा—ओंम ओंम अर्हं परम पद, इष्ट हृदय अब धार ।
अब अपराध क्षमावाणी, कहूँ सामायक सार ॥ १ ॥

चौ०—जिन लोक शिखर थुति कीनी, जग जाल जलाँजल दीनी ।
तिनको प्रणाम हमारो, मोह जानि दुखी निस्तारो ॥ २ ॥

गीता—निस्तार अपनो जान के आचार्य पद बन्दन करूँ ।
उवज्झाय साधु प्रशांत चित चरणार विन्दन मैं परूं ॥
जो वस्तु तत्व विचार समता धारि अणुव्रत आदरें ।
पालें निरन्तर शीलतिन त्रिकाल हम बन्दर करें ॥ ३ ॥

चौ०—जेते तिहुँलोक मंझारी, जिन मन्दिर जग अघहारी ।
कृत्रिय अरु जे अविनाशी, वन्दौं काटो जग फाँसी ॥ ४ ॥

गीता—काटौ त्रिविध फांसीं हमारी दुःख सागर में परौ ।
नहिं कियो सुकृत नाथ में त्रिकाल ते संकट भरौ ॥
जे करें जैसीं भरें तैसी दोष किसको दीजिए ।
करि आस तेरी शरण आयो दास लखि सुधि लीजिये ॥ ५ ॥

चौ०—हम निजि भूति न जानी पर परिणति में मति ठानी ।
भव बोधित बेल वधाई, बीतौ चिरकार गोसाई ॥ ६ ॥

गीता—बीतौ अनन्तानन्तकाल संकल्प बिकलप में दिन गये ।
नहिं घटी है संशय बढ़ी है तृष्णा किये बन्धन नित नये ॥
किस विधि तरै नैया हमारी पाप पत्थर ते भरी ।
जनमादि के जंगल में प्रभु कर्म के बस में परी ॥ ७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चौ०—इन कर्मन सेती उबारो, देकर अवलंम निकारो।
तुम समरथ हो जग त्रासा, विन कारण बन्धु विख्याता ॥८॥

गीता—विख्यात जश तेरा जगत में, भील से जग तिर गये।
तेरे प्रताप त्रैलोक्य पति जिन नाथ नेमीश्वर भये ॥
तिर गये सूकर सिंह मरकट नवल पशु पक्षी घने।
भये बृषभसेन गणधरादि आदि जिनवर के कने ॥ ९ ॥

चौ०—गज श्वान सरप अरु भेखा, अंजन आदिक जु अनेका।
इत्यादि अधम बहु तारे, पहुँच शिव स्वर्ग मंझारे ॥ १० ॥

गीता—पहुंचे स्वरग और मुक्ति में दँडक चरादिक अधमरे।
जिन पांच सौ मुनिमार घाणी डार करि चूर्ण करे ॥
महाव्रज पाप कलंक मंडित तिर गए दुख द्वन्द ते।
यह जानि तेरी शरण लीनी काढ़ प्रभु जग फन्द से ॥ ११ ॥

चौ०—तुम बीतराग जग भूपा, सर्वज्ञ चिदानन्द रूपा।
समदर्शी नीत तुम्हारे, घट घट के जानन हारे ॥ १२ ॥

गीता—तुम आप जानौ कर्म सबके मैं कहां बिनती करूँ।
मैं चोर तेरौ कौन राखे शरण किसकी आदरूँ ॥
तू भार या निस्तार तेरी शरण जग में सार है।
इस विकट संकट जाल में तुम ही से नाथ पुकार है ॥ १३ ॥

चौ०—पूरब भव पाप कमाये, तृष्णा वश जीव सताये।
तिन सबसे अरज हमारी, अब करहु क्षमा सुखकारी ॥१४॥

गीता—करियो क्षमा सुखदायी मैं अज्ञान बश हिंसा करूँ।
मिथ्या वचन कहि दुख दीने छलछन्द करलिक्ष्मी हरी ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सेये कुशील कुकर्म की ने बड़ी है तृष्णा नित नई।
लिपटौ परिग्रह जाल में करिपच अध दुर्गति लहीं ॥ १५ ॥

चौ०—पण थापर हिंसा कीनी, खण पृथ्वी पीड़ा दीनी।
धरि अग्नि तपायो पाणी, पावक दल मल अज्ञानी ॥ १६ ॥

गीता—अज्ञान वश पावक प्रजाली पवन तरुवर सँहरे।
चूलादि ऊखर मूसल से बहु जीव जँगम जग हरे ॥
चाकी से तन पीस डारौ ईर्यापथ सेती टरे।
या भांति जिनपर भाई है बाधा सो क्षमा हम पर करौ ॥१७॥

चौ०—धरि क्रोध जिन्हें दुख दींनों, करि मान अनादर कीनो।
धोका दे प्राण दुखाये, करि लोभ प्रपंच भ्रमाये ॥ १८ ॥

गीता—परपंच करि जिनको भ्रमाया क्षमा हृदये ना धरी।
कटु बचून भाखे दगा दीनी वृथा वाणी आदरी ॥
तजि शोच संयम तप कियो नहिं त्याग आकिंचन हरे।
शीलादितें भज पाप बांधे सो क्षमा हम पर करो ॥ १९ ॥

चौ०—कृमि कीड़ी और सताये, समनस अमनस भरमाये।
दलमल और बांध मारे, भाखे कटु बचान अपारे ॥ २० ॥

गीता—भाखें कटु बचान कान छेदे पूछ नासा खन्डियों।
अतिभार रोपे अनर्थ कीने दन्त डंक विहन्डियो ॥
धर्म न पर उपसर्ग कीने तीर्थ पर पातक करे।
सब जीव करियो क्षमा तज के शल्य हम पावन परे ॥ २१ ॥

अडिल्ल—स्वर्ग नरक नर लोक विषें प्राणी जिते।
चारों गति में वर्तमान जिन थिति तिम्रे ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मैं तिनते करि जोर अरज इतनी करूँ ।
करौ क्षमा अपराध भवोदधि ज्यों तिरूँ ॥ २२ ॥

गीता—तिरूँ भव सागर दुखकरि जो कृपा इतनी करौ ।
अपराध काल अनादिलों के मेरे आजलों के प्रण हरौ ॥
मैं कियो घोर अनर्थ जिन पर बिना, कारण दुख दियो
जिति होय तिति होय क्षमा कराऊँ धर्म का शरण लियौ ॥२३॥

अडिल्ल—बींतौ काल अनादि किये अघमार ही ।
भ्रमत चौरासी लाख जोनि मझार हीं ।
रहौ कौन सौ ठौर जनम जहां न लियौ ।
कौन जीव से नाता जग में ना कियौ ॥ २४ ॥

गीता—नहिं कियौ नाता कौन सेतीं वैर किससे ना कियो ।
चिरकाल धरि धरि स्वांग नरक निगोद में गिर गिर परो ॥
पशु जोनि में वहु दुख पाये तजो शल्य दुखकार ही ।
भव भ्रमण छूटे करम टूटे मिटहि पुदगल चाकरी ॥ २५ ॥

अडिल्ल—जब लौ कर्म को बंध बंधौ जग में फिरूँ ।
पाणिपात्र आहार न जबलों मैं करूँ ॥
जबलों चार कषाय हिरदें ते ना टरै ।
तबलों चारों शरण भावना हम भरें ॥ २६ ॥

गीता—हम करें चारों शरण तेरी भावना चित चाव सों ।
दिन रैन श्वांस उश्वास में अरहंत निकारों भाव सो ॥
जग भोग सम्पत्ति मैं नचाहूँ नाथ अब ऐसी करौ ।
संतोष में चित होय थिर भव भ्रमण के दिन उद्धरौ ॥ २७ ॥

अडिल्ल—तुम हो दींन दयाल बैद्य करुणा पती ।
मैं दुखिया संसारी कर्म योगी यतीं ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गठरी में नहिं दाम न सुकरत मैं कियो ।
तेरी शरण विसरि मरौ मैं अब जियो ॥ २८ ॥

गीता—मरौ न जियौ रह्यौ जगत में बढ़ी है वेदन अति घणी ।
किहि विधि कहूँ आपनी व्यथा चिरकाल जो मोपे बनी ।
सुत मात दारा का न चारा सगे सब देखत रहे ।
बिन पुण्य खाली हाथ नर्क निगोद के संकट सहे ॥

अडिल्ल—डारयौ भांड मंझार पर्कार सूली धरयौ ।
पेल्यो घाणी मांहि पीस चूरण करौ ।
कांटे कँठ कुठार विदारौ तन सबै ।
पियायो तांबा गालि बढ़ी वेदन अब तवै ॥ ३० ॥

गीत—बढ़ी है वेदन किए हैं छेदन फूँक मुक कूँचा दियो ।
कहैं नारकी दुर्वचन पापी क्यों न तू सुकरत कियो ।
विललाय पांयन लोट हारयौ किनहूं मेरी ना सुनी ।
चिरकाल ते भगवान ये सँकट सहे त्रिभुवन धनी ॥ ३१ ॥

अडिल्ल—तुम समरथ जगदीश छुटवायो फँद से ।
चौरासी लाख जोनि तने दुख द्वँदते ॥
तुमसो दाता कौन तुम्हीं जग तात हो ।
बिन कारण जगबंधु तुम्हीं विख्यात हो ॥ ३२

गीता—विख्यात हो सर्वज्ञ सत्य अमोघ वाणी उच्चारो ।
बरसाय धर्मामृत जगत के पाप आतम तुम हरो ॥
सुन सुन तुम्हारे बैन को पशु पक्षी अणुव्रत आदरे ।
गज मोर सिंह भुजंग समता धार भव जल तरे ॥ ३३ ॥

अडिल्ल—जाति विरोधी जीव मिलें हित लाय के ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

करें निजारथ काल लब्धि बल पाय कें।
तुम मांहि संशय नांहि शरण तेरी नहीं।
लाजै तेरौ ही नाम जो अब उभ्ररी रही ॥ ३४ ॥

गीत:—उरभी रही नैया हमारी शरण तेरी आय के।
तौं करै कौन सहाय मेरो करम मच्छ हटाय के ॥
तू पूरण ब्रह्म विवेक सागर नीत लख यश लीजिए।
मैं रहूं चाकर सदा तेरो ये ही वर मोहि दीजिए ॥ ३५ ॥

अडिल्ल-इन्द्र धर्म हित नन्द वस्तु सार है।
माघ शुक्ल दशमी गुरुवार है ॥
भादौं सप्तम मास कंधला पुर वरूँ।
विनवे नैनानंद जगत मंगल करूँ ॥ ३६ ॥
यह अपराध विमोचनी सामायक गुणमाल।
जे नर पढ़े त्रिकाल ही कटें कर्म जंजाल ॥ ३७ ॥
नादौ बिरदौ जगत में अधिकारी बहु जीव।
तिन्हें स्वपर हितकार ही उपजे सुमुत सदीव ॥ ३८ ॥
बीतो काल अनादि यों कियौ करम अघ भार।
चहूं गति सागरे हिंडयो कियो न जप तप सार ॥ ३९ ॥
एक घड़ी आधी घड़ी एक पलक छिन एक।
जो सामयिक आदरें छूटैं पाप अनेक ॥ ४० ॥

॥ इति ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

* श्री सिद्ध-चक्र महात्मा भजन *

श्री सिद्ध चक्र का पाठ करो दिन आठ।
ठाट से प्राणी, फल पायौ मैनारानी ॥
मैनारानी सुन्दरी इक नारी थी।

कोढ़ी पति लखि दुखियारी थी।
नहीं पड़ै चैन दिन रैन व्यथित अकुलानी ॥
फल पायौ मैनारानी।

जो पति का कष्ट मिटाऊँगी।
तो उभय लोक सुख पाऊँगी ॥
नहीं अजागलस्तनत्व जिन्दगानी।
फल पायौ मैनारानी।

एक दिवस गई जिन मन्दिर में।
दर्शन करि अति हर्षी उर में ॥
फिर लखे साधु निर्ग्रन्थ दिगम्बर ज्ञानी।
फल पायौ मैनारान..

बैठी मुनि को कर नमस्कार।
निज निन्दा करती बार बार ॥
भरि अश्रु नयन कही मुनि से दुखद कहानी।
फल पायौ मैनारानी ॥

बोले मुनि पुत्री धैर्य धरो।
श्र' सद्ध चक्र का पाठ करो ॥
नहीं रहे कुष्ट की तन में नाम निशानी।
फल पायौ मैनारानी ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सुन साधु बचन हर्षी मैना ।
नहीं होय भूठ मुनि के बैना ॥
करिके श्रद्धा श्री सिद्ध चक्र की ठानी ।
फल पायौ मैनारानी ॥

जब पर्व अठाई आया है ।
उत्सवयुत पाठ कराया है ॥
सबके तन छिड़का मन्त्र न्हवन का पानी ।
फल पायौ मैनारानी ॥

गंधोदक छिड़कत बसुदिन में ।
नहीं रहा कुष्ट किंचित तन में ॥
भई सात शतक की काया स्वर्ण समानी ।
फल पायौ मैनारानी ॥

भव भोगि भोगि योगेश भये ।
श्रीपाल कर्म हनि मोक्ष गये ॥
दूजे भव मैना पावे शिव राजधानी ।
फल पायौ मैनारानी ॥

जो पाठ करै मन बच तन से ।
वे छूटि जांय भव बन्धन से ॥
मक्खन मत करौ विकल्प कहा निज बानी ।
फल पायौ मैनारानी ॥

—(+)—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्री १०८ मुनि सुमति सागर जी महराज

विदित हो कि आपका गृहस्थ जीवन का नाम नत्थीलाल जी था। आपके पूज्य पिता जी का नाम श्री छिद्दूलाल जी व माता जी का नाम श्रीमती चिरोंजादेवी था। आप अपने परिवार में चार सगे भाई एक बहिन हैं भाई भुन्नीलाल, बाबूलाल, रामस्वरूप तथा कलावती बहिन का नाम है। आपकी धर्मपत्नी का नाम रामश्रीदेवी है आपके दो पुत्र बारेलाल, भागचन्द व एक पुत्री कपूरीबाई का विवाह हो चुका है तथा एक पुत्री शकुन्तलाबाई कुमारी हैं। आप जैसवाल जैन हैं आपका गोत्र भण्डारी है। आपका जन्म शुभ मिती आसोज सुदी ६ वि० सं० १६७५ में ग्राम श्यामपुरा, परगना अम्बाह (जिला मुरैना) में हुआ था। अपने भरे पूरे परिवार का परित्याग कर दिगम्बरी दीक्षा धारण की।

आपकी जीवनी इस प्रकार है:—

आपकी बाल्यकाल से ही धर्म में लगन थी आप काश्तकारी तथा घी का मामूली व्योपार करते थे। आपका विवाह वि० सं० १६८४ में हुआ था और विवाह के थोड़े दिन बाद ही आपको रामदुलारे डाकू हरण कर ले गया था। १४ दिन के बाद आप गिरोह से भाग आये। आप सं० २०१० वि० में गांव से मुरैना आकर रहने लगे और दूकानदारी का कार्य करते रहे। पुन्योउदय से श्री १०८ आचार्य बिमलसागर जी महराज संघ सहित मुरैना में पधारे, उसी समय आपकी धर्मपत्नी ने आप से पूछा कि आचार्य श्री को आहार देने की मेरी इच्छा है। अगर आप आज्ञा देवें तो मैं शूद्र जल का त्याग ले लूँ और आप भी ले लीजिए तब आप (नत्थीलाल) ने कहा आप से बने तो आहार दो हम से तो कुछ नहीं बनता, तब आपकी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

धर्मपत्नी ने शूद्र जल का त्याग कर दिया और ज्ञानबाई के साथ आहार दिया फिर आपकी धर्मपत्नी ने कहा अब हम अपने मकान पर आहार बनायेंगे। आप महराज को ले तो आवेंगे। तब दूसरे दिन घर पर आहार बनाया व आप महराज को लेकर अपने घर आ गये और खड़ेरहे, महराज भीखड़े रहे महाराजकी निगाह आप परपड़ी तो आपनेकहा महाराज मुझसे त्याग नहीं बनेगा तब महाराज लौटनेलगे तब आपने सोचा कि मेरे घर से महाराज बिना आहार लिये लौट गए। तो मेरा जैन कुल में उत्पन्न होना ही बेकार है। फिर क्या था उसी समय आपके भाव जगे और उसी समय आपने शूद्र जल का त्याग किया व आचार्य श्री को आहार दिया।

आहार देने के बाद भावना हुई कि अब और त्याग करते जायेंगे फिर पं मक्खनलालजी की संगति में रहने लगे व शास्त्र अध्यन करते रहे। सं० २०२१ में श्री १०८ शान्तिसागर जी महराज से दूसरी प्रतिमा धारण की व वि० सं० २०२३ मे एक मकान खरीदा और इसी वर्ष मुरैना में गजरथ पंचकल्याणक महोत्सव हुआ इस अवसर पर श्री १०८ विमलसागर जी महराज पधारे इनसे आपने सातवीं प्रतिमा ली और इसी तरह आप त्याग की ओर बढ़ते गए।

संसार को अथिर जानकर आपने अपने मन में मुनि दीक्षा लेने की धारणा बना ली। सं २०२४ में फागुन सुदी १२ को सोनागिर गए वहां श्री १०८ मुनि निर्मलसागर जी से मुनि दीक्षा लेने का विचार किया मगर श्री १०८ मुनि विमलसागर जी की आज्ञा न पाकर बाद में रेवाड़ी पहुँचे वहां पर श्री १०८ मुनि बिमलसागर जी महराज से चैत सुदी १३ वि० सं० २०२५ को ऐलक दीक्षा ली और आपका श्री १०५ वीर सागर नामकरण हुआ। वहां से बिहार करके श्री गुरु जी के साथ देहली पधारे वहां पर चातुर्मास किया। इसी अवसर पर सर्व प्रथम सावन सुदी ११ को केशलोंच के समय आप बड़े शान्त

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चित्त दिखलाई दे रहें थे थोड़ी देर में आपने केश लोंच कर डाला, उस समय आपकी जय जयकार से आकाश गूँज उठा। चतुर्मास के बाद सँघ के साथ साथ आप गजियाबाद पधारें। अगहन बदी १२ वि० सं० २०२५ को दूसरा केशलोंच हुआ। उसी समय श्री गुरु जीं से मुनि दीक्षा हेतु प्रार्थना की और उसी समय श्री १०८ मुनि विमलसागर जी महराज ने मुनि दीक्षा दे दी फिर आपका दीक्षित नाम श्री १०८ मुनि सुमति सागर जी महाराज रक्खा गया।

धन्य है आपकी धर्म पौरुषता को, कि चन्द दिनों में ही आप सर्व परिग्रह त्याग कर भरा पूरा परिवार छोड़कर निरग्रन्थ मुनिपद प्राप्त कर लिया इससे समाज भी धन्य हुआ और अपने परिवार का नाम उज्जवल किया।

आपकी विशेषतायें व धर्म का फल

आप ६ साल पहले श्री सम्मेद शिखर जी की बन्दना के लिए गए थें, सो पहाड़ पर श्री पार्श्वनाथ के मन्दिर में आपने ब्रह्मचर्य ब्रत लिया था और आपकी पत्नी ने शीलब्रत लिया था और आपने प्रतिज्ञा की थी कि भगवान मैं पैदल आकर श्री सम्मेद शिखर जी की बन्दना करूँ। सो अब आप पैदल शिखर जी की बन्दना करने जा रहे हैं।

उपसर्ग व धर्म प्रभावना

१—नदी चम्बल में आप डूबने से बच गए व साथ की दो बाई डूब कर मर गई।

२—डाकुओं के साथ आप डाकुओं के घेरे में थे, जब पुलिस से गोली चली आपके चरणों में गोली आते ही ठण्डी पड़ जाती थी।

३—चोरों ने जँगल में घेर लिए, मारने को थे इतने में पुलिस मिलटरी आ गई और चोर पकड़ लिए गए पर आपने चोरों को सजा न होने दी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्री १०८ सुमति सागर जी महराज का मोहिनी कर्म के उपलक्ष में प्रवचन सार

प्रश्न—शिष्य प्रश्न करता है कि कर्म बन्ध कब कब होता है ?

गुरुवर—पशुओं को तो एक जगह से दूसरी जगह हम रस्सी द्वारा बांध कर ले जाते हैं।

शँका—लेकिन मनुष्य को किस वस्तु से बाँध कर ले जाना चाहिए ?

समाधान—गुरु जी कहते हैं कि मनुष्य जैसे पशुओं को स्वार्थ के वशीभूत होकर उसे एक जगह से दूसरी जगह ले जाते हैं जिस भाव से जैसा कर्म किया जाता है वैसा ही फल जीव को भोगना पड़ता है। इसका कारण यह है कि जिस समय यह जीव किसी भी शुभ या अशुभ कार्य करने का चिन्तन करता है उसके लिए वैसी ही सामग्री एकत्रित करके वह उस काम को करने लगता है। इसी समय जिस भाव से जीव क्रिया है उसी समय इस जीव के शुभ-अशुभ परिणाम होते हैं। परिणाम होने पर ही शुभ-अशुभ कर्मों का बन्ध होता है। शुभ-अशुभ रूपी कर्मों की रस्सी को ही बन्ध कहते हैं। इसी से कर्मों का बन्ध होता है।

शंका—ऐसी कौन सी वस्तु है जो जीव को बांधकर सुगति दुर्गति की ओर ले जाती है तथा इसे कौन लेजाता है।

समाधान—जिस प्रकार मनुष्य पशुओं को किसी मजबूत रस्सी से बांध कर ले जाता है उन्हीं पशुओं में से घोड़ा या भेड़ ऊँट के बाल काटकर उन्हीं के बालों की रस्सी बनाते हैं उसी रस्सी से बांधकर उसे स्वार्थ के वशीभूति होकर चारों तरफ घुमाते हैं उसी बालों की रस्सी से उसे ही बांध

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

देते है। इसमें मनुष्य का क्या लगा ? कुछ नहीं। यह जीव स्वयं हीं मोह के वशीभूत होकर इन कामों का कर्ता बन बैठा है। जैसे बाल रूपी स्वार्थ की रस्सी से पशुओं को ले जाते हैं। इसी तरह मनुष्य को यह कर्म की मोह रूपी रस्सी शुभ अशुभ के कर्म के परिणाम द्वारा जकड़ कर सुगति दुर्गति की ओर मनुष्यको जकड़ कर ले जाती। यह मोहिनी कर्म की रस्सी ही इस भोले जीव को चारों गतियों में घुमाती रहती है ।

शंका—पशुओं को बांधने में स्वार्थ है। लेकिन जीव से क्या स्वार्थ हल हाता है।

समाधान—गुरुवर बतलाते हैं कि प्रश्न तो तुम्हारा उत्तम है, बतलाते हैं।

उदाहरण—सुनो राजा सेवक को आज्ञा देता है कि चोर को पकड़ कर उसे बन्दीगृह में डाल दो। पकड़ने वाले का क्या स्वार्थ है—इसमें राजा हुक्म देता मध्य वाला पकड़ कर लाता है क्यों ? इसलिए कि उसने चोरी की, चोरी के कारण उसे बन्दीगृह में बन्द कर दिया। इसी तरह इस जीव के साथ कर्म लगे हुए हैं। यह जीव पांच इन्द्रियों के विषय में फंसे रहने के कारण शुभ-अशुभ के कर्म कारण जैसा कर्म किया वैसी ही गति में वह मोहिनी कर्म की रस्सी पटक देती है। रागद्वेष नहीं करना चाहिए जहां राग है वहां द्वेष है। इसलिए—हे जीव तू अपने को जड़ से चेतन में लाकर राग द्वेष छोड़कर शुभ कर्म कर—जिससे तेरा शुभ कर्म का बन्ध हो। मोह ही नाश का कारण है।

———

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मुनि श्री १०८ सुमतिसागर जी महराज का प्रवचन

स्थान—जैन मन्दिर लालपुरा, इटावा।

प्रवचन—आज समस्त प्राणी मात्र ज्ञान को जगह जगह ढूँढ रहे हैं तो हमारी जिन वाणी क्या कह रही है कि देखो भाई ज्ञान बाहर नहीं है ज्ञान अपने में भरा हुआ है जैसे बरतन में रुई को कूट कूट कर भरते हैं इसी तरह ज्ञान हमारे में भरा हुआ है। जैसे हाल के जन्मे हुए बालक को दूध पिलाना कौन सिखाता है उसे खुद का ज्ञान है पर हमारे ऊपर अज्ञान का परदा पड़ा हुआ है मोहवश हम भूल रहे हैं जिस प्रकार मृग कस्तूरी के सुगन्ध से घूमता फिरता रहता है। उसकी तलाश करने के लिए उसे यह ज्ञान नहीं है कि कस्तूरी मेरे ही अन्दर है इसी प्रकार से यह आत्मा अपने को भूल कर पर में स्नेह करता है यह इसकी भूल है अपने में ही देखने की कोशिश करे पर में नहीं मिलेगी।

प्रद्युमनकुमार मुनि हुए तो सारी सभा में जहां वसुदेव, बासदेव और बलभद्र आदि बैठे हुए थे, कहते भये न हम तुम्हारे हैं, न तुम हमारे हो शरीर के पिता थे और हम तुम्हारे पुत्र थे। आज हम संसार से उदासीन हुये हैं बासदेव कहने लगे अरे क्या कहता है कल का छोकरा हमको समझाने आया है फिर प्रद्युमन मुनि जी बोले अच्छा तुम ही यहां के खम्भ बने रहो अब हम तो जाते हैं, रनवास में आकर स्त्री से बोले हम तो दीक्षा लेते हैं स्त्री बोली तुम यहां आये क्यों क्या यहां लड़के या लड़की का बिवाह था। तुम दीक्षा ग्रहण करो या मत करो मैं तो आर्जिका होती हूँ सफेद वस्त्र पहनकर आर्जिका हो गई यह सब परिणामों का खेल है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

: श्रावक प्रतिक्रमण :

॥ मंगलाचरण ॥

श्री सन्मति को नमन कर, सन्मति के दातार।
जिनके चरण प्रताप से, भवि जन हो भवपार॥
लिखूँ आत्म हित अभी, प्रति क्रमण सुसार।
पढ़त सुनत भवि जन जिसे, हो मंगलाचार॥

॥ ॐ ह्रीं नमः सिद्धेभ्यः ॥

अर्थ भाषा प्रति क्रमण लि० मरहठी भाषा से भाषा अनुवाद कर्त्ता

मंगलसैन जैन मैलिस

हे भगवान ! मैंने प्रति क्रमण करते हुए दर्शन प्रतिमा में जो दया धर्म अंगीकार न किया हो और एक इन्द्री, दो इन्द्री, ते इन्द्री, चौ इन्द्री व पंच इन्द्री जीवों को मारा हो, पीड़ा दी हो या उनको संतापित किया हो, उनके प्राणों का वियोग किया गया हो, गमन करते हुये रात्रि या दिन में मन बचन काय से अतिचार या अनाचार लगाया होय तो हे स्वामी ! मेरा दुष्कृत टालो अर्थात् मेरा पाप मिथ्या होवे।

हे भगवान ! दर्शन प्रतिमा को धारण करते हुए अष्ट मूलगुण (मद्य, मांस, मधु, हिंसा, झूंठ, चोरी, कुशील परिग्रह) का एक देश

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

त्याग रूप पांच अणुव्रत, तीन प्रकार का पालन करते हुये अभक्ष फल खाये हों, अनछना पानी स्तेमाल में लाया गया हो, छाछ, दही आदि के मेल करके बेदल को आनन्द से सेवन किया हो या दूसरों को कराया हो अथवा करते हुये को अनुमोदना दी हो इस प्रकार मन बचन काय से किया हो तो वह मेरा दुष्कृत दूर हो जावे ।

हे भगवान ! दर्शन प्रतिमा में प्रमाद के बशीभूत होकर जिनेन्द्र भगवान के कहे हुये सप्त तत्वों के स्वरूप में शंका की हो अथवा सांसारिक सुख को कल्याण कारी समझ तत्सम्बन्धी कार्यों में संलग्न हुआ हूँ ऐसे कार्य को मन बचन काय से कृत कारित अनुमोदना से रात्रि या दिन में किये हुये मिथ्या प्रमाण नष्ट होवैं, हे जिनेन्द्र देव ! मैं प्रति क्रमण करते हुए व्रत प्रतिमा में जो हिंसा का त्याग बताया है वह मैंने प्रमाद के बशीभूत व अभावधानता और अज्ञानता से किसी जीव को उल्टा किया हो, मारा हो, बांधा हो, पैर से कुचला गया हो या अलग कर दिया हो या मिला दिया हो इस प्रकार की खोटी प्रणाती मन बचन काय से कृत कारित अनुमोदन से रात्रि वा दिन में हिंसा सम्बन्धी रूप लगाई हो । सो सब साम्य रूप परिणामों से मिथ्या होवे ।

हे भगवान ! प्रतिक्रमण करते हुए व्रत प्रतिमा में असत्य भाषण का त्याग बताया है । खोटा उपदेश जो कल्याणकारी क्रियाओं से सम्बन्ध नहीं रखता है दिया हो या संसार में फंसाने वाला खोटा लेख लिखा हो तो ऐसा मिथ्या प्रमाण मेरे हृदय से दूर होवे ।

हे देवाधि देव ! प्रतिक्रमण में जो चोरी का त्याग बताया है । सो मैंने किसी की धरी पड़ी व धरोहर रक्खी हुई या भूली हुई वस्तु को मन बचन काय से हरण करने का प्रयत्न किया हो अथवा करते को देख हर्ष माना हो या अनुमति दी हो सब शुभ ध्यान के विचार से मिथ्या होवे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हे त्रिलोकीनाथ ! प्रतिक्रमण करते हुए जो ब्रह्मचर्य व्रत बताया सो मैंने पर स्त्री को स्वप्न में भी (स्त्री अपेक्षा) किसी पर पुरुष को स्वपन में भी कुचेष्टा से देखा हो या ऐसा करने वाले को अच्छा समझा हो या ऐसा करने की अनुमति दी हो या अनंग क्रीड़ायें की हों या काम भोग की अतिशय इच्छा की हो ऐसा मन से वचन से काय से रात्रि या दिन में किया हुआ दुःखरूपी परिणाम मिथ्या हो।

हे जिनेन्द्र देव ! मम आत्मा में तेरे चरण के प्रसाद से ब्रह्मचर्य का पालन कर सुख व शांति प्राप्त होवे ।

हे जिनेन्द्र देव ! व्रत प्रतिमा में जो परिग्रह परिमाण बताया है ऐसे जमीन पशु धन धान्य, सोना चांदी, रुपया दासी दास, बरतन कपड़े इत्यादि परिग्रह के प्रमाण का उलंघन किया हो, बढ़ा लिया गया हो, या भूला गया हो, रात्रि में या दिन में मन बचन काय से खुद किया हो या करने की सलाह दी हो अथवा करते को देख कर हर्षायमान हुआ हूँ तो वे मेरे दुष्कृत हो जाय ।

हे प्रभू ! दिग्व्रत में चारों दिशाओं को व विदिशा की मर्यादा का या ऊपर नीचे के स्थान का किए हुए प्रमाण का मन बचन काय से तथा कृति कारित अनुमोदना से उलंघन किया हो या बढ़ा लिया हो या विस्मरण किया हो या मर्यादा से बाहर गुफा विमान या खाई के जरिए से गया हूँ या दूसरे को भेजा हो या अनुमोदना की हो तो वह दुष्कृत्य मेरा मिथ्या होवे ।

हे वीतराग ! प्रति क्रमण करते हुए दिशावकाशित व्रत बताया है सो दिग्व्रत में किए प्रमाण हुए के अन्दर नियम रूप सीमा के बाहर किसी को भेजा हो, शब्द किया हो, कुछ मंगाया हो, अपना शरीर व अंग दिखाकर संकेत किया हो कंकर पत्थर फेंका हो ऐसा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

खुद किया हो या दूसरे से कराया हो करते को देखकर खुशी मनाई हो तो वह मेरा खोटा परिणाम मिथ्या होवे ।

हे देवाधिदेव ! अनर्थ दण्ड त्याग बताया है सो मेरे से राग भरे भंड बचन निकले हों, बिना मतलब वनस्पति कायक को छेदा हो, अग्नि कायक जलाई हो बिना मतलब पवन काय को सेवन किया हो, जल सिड़ाया हो पृथ्वी खोदी हो, अन्न आदिक मोरी में डाला हो, बिना मतलब भोगोपभोग की सामग्री बढ़ाई हो । अयत्नाचारपूर्व मन बचन काय को प्रवर्ताया हो ऐसा रात्रि या दिन में कृतकारित अनुमोदना से किया हुआ मिथ्या वाद नष्ट होवें ।

हे भगवन ! सामायिक शिक्षाव्रत में जो मन बचन काय को चलायमान किया हो अथात् त्रिकाल सामायिक करते हुए मन बचन काया की प्रवृत्ति दूसरे कार्य में लगाई हो या सामायिक में अनादर भाव रक्खे हों या सामायिक पाठ बिस्मरण हुआ हो तो हे प्रभू वे अतिचार वा अनाचार रात्रि या दिन में मन बचन काय से तथा कृतकारित अनुमोदना से किए हुए भाव मिथ्या होवे । और जिनेन्द्र गुणानुवाद तथा किए हुए दोषों की माफी रूप आलोचना करने में मन संलग्न होवे ।

हे स्वामी ! प्रोषध शिक्षा व्रत में बिना साफ किए पूजा आदि से उपकरण उठायें हो या बिना देखे पृथ्वी हर मलमूत्र क्षेपा हो, उपवास में अनादर किया हो या उचित क्रियाओं को भूल गया हूँ । ऐसे अर्ह-निश मन बचन काय से कृतकारित अनुमोदना से पापाश्रव किया होय सो मिथ्या होवे ।

हे सर्वज्ञ ! यदि मैंने भोगोपभोग शिक्षा व्रत में विषय रूप पिशाचनी का आदर किया हो पूर्व किए हुये भोग का स्मरण किया हो लालसा की हो या अति तृष्णावान हुआ हूँ । निशिवासर मन बचन

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

काय से कृतकारित अनुमोदना से पापाश्रव का कारण बनाया हो सो सब मिथ्या होवे ।

हे जिनेन्द्रदेव ! यदि मैंने प्रतिक्रमण करते हुए अतिथि संविभाग व्रत में मुनि आदि को सचित वनस्पति पर रक्खे हुए आहार को दिया हो या दूसरे के होने पर द्वेष बुद्धि की हो या प्रसाद के वशीभूत होकर आहार के देने की विधि विस्मरण हो गई हो ऐसा मन बचन काय से स्वयं किया हो या अनुमति दी हो तथा दूसरे को करता देख हर्षायमान हुआ हूँ तो वे अघ घन अर्थात् पाप समूह नष्ट होवे ।

हे भगवान ! सल्लेषना व्रत में यदि मैंने जीवित रहने की बांछा, मरण की बांछा, मरण का भय किया हो या मित्रादि को कुटुम्बी आदि को स्मरण किया हो आगामी भोगों की इच्छा की हो ऐसे रात्रि अथवा दिन में मन बचन काय से खुद किया हो या दूसरे को अनुमति दी हो तो मेरा मिथ्या परिणाम दूर होवे और हे प्रभो ! सल्लेषणा में जिन धर्म स्मरण व समता रूप परिणाम होवे ।

हे लोकालोक प्रकाशक ! अपने किये दोषों की निर्वति के लिए आलोचना करने में देश सम्बन्धी, स्थान सम्बन्धी, काल सम्बन्धी, मुद्रा सम्बन्धी, नमस्कार सम्बन्धी, कायोत्सर्ग सम्बन्धी, स्वासोश्वास सम्बन्धी प्रतिक्रमण करते हुए क्रिया में हीनता आई हो अतिचार अथवा अनाचार लगाया होय। मन बचन काय से स्वयं किया हो या अनुमति दीं हो या करते को देख कर हर्षायमान हुआ हूँ तो वे किये हुए पाप मेरे मिथ्या हों ।

हे भगवान ! मैंने व्रतों में प्रमाद असावधानी तथा अज्ञानता के कारण अतिचार व अनाचार लगाकर व्रत भंग किया हो तो श्री अर-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हन्त जी, सिद्ध जी, आचार्य जी, उपाध्याय जी, सर्व साधु जी, पंच परमेष्ठी के समक्ष मन बचन काय शुद्धी पूर्वक उत्तज दृढ़ व्रत अंगीकार होवे।

सम्यक दर्शन ज्ञान चरित्र में दृढ़ करने वाले दया के समुद्र श्री १००८ गुणोंकर शोभायमान ऋषभादि महाबीर स्वामी पर्यन्त चतुर्विशंति जिनेन्द्रदेव के लिए मन बचन काय की शुद्धी पूर्वक अष्टांग नमस्कार करता हूँ।

मैं जिन वाणी के शब्द उच्चारण करते हुए यदि अक्षर पद मात्रा से अज्ञानता के बशीभूति होकर विहीन वा आर्थिक पाठ किया हो तो हे सरस्वती देवी ! वह प्रमाद व अज्ञानता दूरहोवे। और तेरा प्रकाश हृदयरूपी कमल पर सदैव रहे। हे विभो ! मेरा तमाम समय संतोष, अर्चत स्वाध्याय, संयम और आत्म तत्व में लगे सदैव सज्जन पुरुषों की संगति प्राप्त हो। दूसरे के दोषों को कहने में जिह्वा बल रहित तथा सत्पुरुषों का गुणानुवाद कराने में शक्तिशाली होवें और मुनि अर्जिका त्यागी विद्वानों की भक्ति में यह मन सदा संलग्न होवे

हे जिनेन्द्र देव ! जब तक मेरा यह संसार बंन्धन न छूटे तब तक जिनवाणी श्रवण सुपात्र दान निर अतिचार व्रत पालन होवे दीन दुखी जीवों पर करुणामय व विपरीत बुद्धि रखने वालों पर मध्यस्थ परणति होवे।

भाषाकार की अन्तिम प्रार्थना—

श्री परम वीतराग देवाधि देव सर्व विघ्नोंकर रहित अविनाशी शुद्ध बुद्ध सच्चिदानन्द मय निर्विकार परम प्रकाशमान ज्योतिकर विभूषित अचल एतद्गुण विशिष्ट श्री सर्वज्ञदेव को नमस्कार कर स्वबुद्धि के अनुसार धर्म प्रेमियों के हितार्थ शब्द रचनात्मक प्रतिक्रमण का टीका समाप्त करता हूँ।

इति श्री प्रतिक्रमण भाषा समाप्तं शुभम् ॥०॥

श्रीः ओ३म् श्रीः ओ३म् श्रीः ओ३म् श्रीः ओ३म श्रीः ओ३म्

॥ धर्म वृक्ष फलीभूत हो ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

॥ श्री तीर्थ बन्दना ॥

आदि जिनेश्वर प्रतिमा बन्दू–बर्द्धमान गुण गाऊँ जी।
सकल तीर्थ मुनिगण पंडित अती अनागत ध्याऊँ जी॥
गुरू गौतम शारद मन लाऊँ तीर्थ सकल गुण गाऊँ जी।
पंच परम पद नित ही सुमरूँ–रत्न त्रय मन लाऊँ जी॥
जम्बू द्वीप मनोहर सोहे–लक्ष योजन परणाम जी।
मध्य सुदर्शन मेरू विराजे विजय अचल तहां भानू जी॥
मन्दिर विद्यु त मालीं सोहे, अस्सी चैत्यालय बन्दूं जी।
कोस बतीस कैलास बिराजे, रिषभदेव निर्वाणो जी॥
शिखर देश के मध्य विराजे, सम्मेदा चल बन्दूं जी।
कर्म काट निर्वाण पहुँचे, बीस जिनेश्वर बन्दूं जी॥
चम्पापुर वासुपूज्य बन्दूं, पावापुर वर्धमान।
नेमिनाथ गिरनारी बन्दूं, यादव कुल के भानू जी॥
कोटि बहत्तर मुनीश्वर बन्दूं, सात से फणीवर बन्दूं जी।
मांगी तुन्गी शिखर विराजे, मुनिवर कौड निन्याणु जी॥
गज पन्था शत्रुंजय बन्दूं, कोटि शिला तारंगा जी।
मुक्तागिरि सोनागिरि बन्दूं; पावागढ़ पुनि बन्दूं जी॥
आबूगढ़ चैत्यालय बन्दूं अतिशय तीर्थ बड़वानी जी।
अन्तरीक्ष पारस मन बन्दूं, रामटेक शांतिनाथ जी॥
रेवा नदी सिद्ध अनन्ता, सिद्ध क्षेत्र मुनि बन्दूं जी।
रिषभदेव अरु गोमट बन्दूं, माणिक स्वामी बन्दूं जी॥
पाली शांति जिनेश्वर बन्दूं, भोपा चल जिनराज जी।
आबूगढ़ श्री पारस बन्दूं, सारँगपुर महाबीर जी॥
जामनेर आदीश्वर बन्दूं, चिंतामणि उज्जेनी जी।
रिषभदेव बावन गज बन्दूं, राजगिरी गुण गाऊँ जी॥
तेरा महाबीर स्वामी बन्दूं, समवशरण जिन टानू जी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उदय गिरि चैत्यालय बन्दूं, सोमपुरी जिनराज जी ॥
अकलेश्वर एरोड़ा बन्दूं, विधू हरण कचनेरा जी ।
जलददेव श्री गोमट बन्दूं, सवा पांच से दंड जी ॥
नन्दीश्वर कुंथलगिरि बन्दूं, जन्म कल्याणक काशी जी ।
सिंघपुरी पेटेश्वर बन्दूं, द्वारावती पुनि बन्दूं जी ॥
कल्पवासी चैत्यालय बन्दूं व्यंतरवासी पुनि बन्दूं जी ।
भवनवासी चैत्यालय बन्दूं, ज्यौतिषवासी पुनि बन्दूं जी ॥
पातालवासी चैत्यालय बन्दूं, बन्दूं पंच प्रकारे जी ।
बीस व्यहर चैत्यालय बन्दूं, बन्दूं तीस चौबीसी जी ॥
तीन लौक चैत्यालय बन्दूं ।
अधो मध्य उर्द्धलोक पुनि बन्दूं जी ॥
अकृत्रिम कृत्रिम चैत्यालय बन्दूं ।
भाव सहितल पुनि बन्दूं जी ॥
चार दिशा चैत्यालय बन्दूं ।
पूर्व पश्छिम उत्तर दक्षिण पुनि बन्दूं जी ॥
आठ दिशा चैत्वालय बन्दू ।
दिशा विदिशा पुनि बन्दूं जी ॥
दोय दिशा चैत्यालय बन्दूं ।
भोग भूमि कर्म भूमि पुनि बन्दूं जी ॥
बन्दरा भोग भूमि चैत्यालय बन्दूं ।
भरत ऐरावत विदेह क्षेत्र पुनि बन्दूं जी ॥
जम्बू द्वीप चैत्यालय बन्दूं, अर्ध दोय द्वीप पुनिबन्दूं, जी ।
एक दीप चैत्यालय बन्दूं, तींन द्वीप पुनि बन्दूं, जी ॥
तेरह द्वीप चैत्यालय बन्दूं, भाव सहित पुनि बन्दूं जी ।
नन्दीश्वर बावन चैत्यालय बन्दूं, मन वच काय पुनि बन्दूं जी ॥
हर एक दिशा चैत्यालय, तेरह सहित बन्दूं जी ।
अँजनि गिरि चैत्यालय बन्दूं, दधि मुख पुनि बदूं जी ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रतिकर पर्वत चैत्योलय बन्दूं, मन बच काय पुनि बन्दूं जी।
स्वानदीश्वर बावद चैत्यालय बन्दूं. चतुर्मुख चारदिशा पुनि बन्दूं जी
हर एक मन्दिर प्रतिमा बन्दूं, एकसौ आठ प्रतिमा भाव सहित बन्दूं जी।
हर एक प्रतिमा पांच से, धनुष रत्नमयी पुनि बन्दू जी॥
अरहँत लिख प्रतिमा बन्दूं, भाव सहित पुनि बन्दूं जी।
तीन कटनी पर प्रतिमा बन्दू, भाव सहित पुनि बन्दूं जी॥
चार अँगुल अधर प्रतिमा बन्दूं।
भाव सहित पुनि बन्दूँ जी॥

———

सांची मान सहेलीं परसों पीतम लेवे आवेगो॥
चलबे की तैयारी करले सत सयं को टोसा रखले।
चलती बिरिया विदा की बेला,
फिर को पकवान बनावेगो—सांची मन ··· (१)
क्रोध मान और माया ममता,
इनसे छोड़ दे नेह और नाता।
जे कहूँ साथ चले तेरे,
तोय जनम जनम भटकावेगो—सांची मान······ (२)
शांति दया और सुमत सहेली,
इनसे करले नेह अलबेली।
जो कहूँ करम मिलो रस्ता में,
तेरे पास न आवेगी—सांची मान······ (३)
भाई बन्धु और कुटुम्ब कबीला,
थे सब स्वारथ के हैं भीला।
विदा की विरिया इनके आगे,
तेरो डोला मचकत जावेगो-सांची मान······ (४)
श्री जिनवर को सुमरन कर ले,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सत्‌गुरु सीख शीश पर धर ले।
नेक न डर तू "नारायनी",
तेरी शिवपुर की टिकट कटावेगो-सांची...... (५)

———

तर्ज रसिया

इकली घेर लई यत्बन में,
करम तैंने कैसे ठानी रे।
जाती थी मैं अपनी नगरिया,
घेर लई तूने मेरी डगरिया
ममता की बेड़ी मेरी पग में डारी
तेरो कहा बिगाड़ो रे। इकली घेर०। (१)
शांति दया और सुमत सहेली,
बचपन से इनके संग खेली
सम्यक दर्शन जो आ जावे
तेरो नाश कराय दऊँ रे। इकली घेर०। (२)
आप रहे मेरे चेतन प्यारे
नेम धरम उनके रखवारे
जो कह आय सम्यक ज्ञान
तेरो खोज मिटाय दऊँ रे। इकली घेर। (३)
व्रत नियम को मैंने धारे
तप शील को भी आ चारे
ओ कहूँ आ जाय सम्यक चारित
तेरो अन्त कराय दऊँ। इकली घेर०। (४)
श्री जिनवर से ध्यान लगाय ले
जिन वाणी हृदय में धर ले
अब मत घबड़ावे "नारायनी"
करम तेरो कछु न बिगाड़े रे। इकली घेर०। (५)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भजन

हमें सुमती स्वामी तुम्हारा सहारा।
श्यामपुरा के राजदुलारे छेदीलाल के प्राणों प्यारे।
जो दर्शन दिये फिर दुबारा भी देना।
वह 'चिरौंजा' के आंखों के तारे ॥ १ ॥ नि०
सुना करती थी जो तारीफ तुम्हारी।
तो वैसा ही पाया नजारा तुम्हारा ।' २ ॥
अजब मुस्कराहट अजब शान तेरी।
अजब नूर प्यारा, है स्वामी तुम्हारा ॥ ३ ॥
जो छीना हैं दिल को न दिल को हटाना।
हटा लोगे दिल को न होगा गुजारा ॥ ४ ॥
करो सेवकों की स्वामी रक्षा।
सब प्राणियों को सहारा तुम्हारा ॥ ५ ॥
दया हम पे करना दया के हो सागर।
करोगे तुम्हीं भव सागर से पार ॥ ६ ॥
सिवा प्रेम के हम पे देने को हैं क्या।
झुका शीश चरणों में स्वामी हमारा।
रामदेवी बाई चरणों में आई
क्षमा हमपे करना क्षमा चाहती हूं
बड़े प्रेम से निर्मल पुकारूँ ॥

[+]

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गजल

मुझे दृष्टि आतम सुहाई हुई है ।
मेर तन में मन में जमाई हुई है ।
तेरा ध्यान अनुपम जो पाता खुशी है ।
उसी हृदय में सुनाई हुई है ।
नगर द्वार वन में सकल थान ढूंढ़ा ।
छटा उस प्रभू की जो छाई हुई है ।
सकल सभी रंग देखे न वह रंगपाया ।
कि जिस रग में जो रंगाई हुई है ।
सकलतत्व निर्भय समा वाँध रहते ।
जहाँ गुपा अगम की समाई हुई है ।
जो आनन्द गुण में सदा तृप्ति रहते ।
उन्हीं को परम लब्ध आई हुई है ॥

[❋]

दोहा १

आतम अनुभव कीजिए, रे चेतन ॥ दिलदार ॥
छोड़ सकल ममता संभल, लांजे शिव सुख द्वार ॥
जग देखी माला सुलभ, पहरे कंठ सुजान ।
छुट जाय सब भ्रम तभी, उपजै केवल ज्ञान ॥
इस माला में पुष्प सब, एक रूप गुणपूर ।
जाकी अनुपम गंध से, होत गंध चूर ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लावनी

निज पद में धर राग, जगत वैराग्य तथा सुख पावेगा।
चेतन मेरे आपका रूप हृदय झलकावेगा ॥ टेक ॥
सर्व दुखों से रहित अवस्था पूरण ज्ञाना नन्द-मई।
भय अरु ग्लानि नहीं संशय की इसमें कोई बात रही।
नहिं पुद्गल नहिं काल नहीं आकाश न धर्म अधर्म मही।
राजत शुद्ध स्वभाव सार निज चेतन धातू रूपमई।
करके मनन निज शक्ति का तू सब भव नीर सुखावेगा ॥१॥
भ्रम बुद्धी न दिया झकारा परसे मिल बैठा इक हो।
नर नारीधन गृह सम्पति में मानी है अपन यत को ॥
हैं स्वारथ के सगे सभी, हरदम देखें निज मतलब को।
शक्ति रहित जब हुआ न करता प्रेम कोई मद से भरहो
ऐसे जग से मोह दूर, कर तब शिव घर में जावेगा ॥२॥
तज अजीवका संग भेद-विज्ञान-खड़्ग करमें ले ले।
जीव अरूपी है अनंत पर एक रुप ले तू गहले ॥
शुद्ध अभेद--दृष्टि में आकर समता रस में तू पगले।
परमातम हैं तुम्हीं जाप सोहं की नित सुमरण करले।
वीतराग समयक्त नीरसेतू निज तृषा बुझावेगा ॥३॥
कर प्रमाद को चूर आपमें मग्न सदा रहना अच्छा।
विचलित हो जब शास्तरका रस पान सदा करना अच्छा।
अथवा कर उपकार जगत का प्रेम धाम अच्छा रहना।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

 मैरा ५ पैसे

अब विषय यां बदले की कोई चाह नहीं धरना अच्छा।
सुखसागर के निर्मल जल से, निश्चय शुद्ध हो जावेगा ॥४॥

[卐]

दोहा २

निज अनुभव में दृष्टि धर, पर अनुभव मख मोर।
कैसे मम कारज सरे जाको ओर न छोर ॥
दास पुकारत आयकै, बार बार अकुलाय।
कोई मोहिं देखे नहीं, किस विधि प्राण रहाय ॥
चित कठोरता त्यागिये, करुणा मृत को सींच।
दृष्टी मोपर कीजिए, रहूं शिवालय के बीच ॥
वीतरागता छांड़कर, हो सराग जिनराज।
इतना मम कारज करो, दीजे शिवको राज ॥

[※]

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भाव
दर्शन ज्ञा
यथा ख्याति,
हे सर्वज्ञ सर्व
अगुरु लघु
नमो आयरिय
जैन धर्म के
नमो उवज्झा
अँग उपाँग
नमो सव्व
सत्य अहिंसा
बीथमंत्र करे प्र
ावन

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi